मरुधरा

[कविता-लघु कथा संकलन]

सम्पादक

- महेश संतुष्ट
- ओम पुरोहित 'कागद'
- राजेश चड्ढा
- नरेश विद्यार्थी

मरुधरा साहित्य परिषद्

© प्रकाशक

प्रकाशक : मरुधरा साहित्य परिषद्
हनुमानगढ़ (राजस्थान)

प्रथम संस्करण : 1985

मूल्य : बीस रुपये मात्र

मुद्रक : एस० एम० प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

समर्पित

रक्तसिंचित बालू को !



—

दो शब्द

संकलन के विषय मे कुछ भी लिखने से पूर्व एक संयोग एवं दैवीय कृपा का जिक्र किया जाना अति आवश्यक है। तपते रेगिस्तान में अनायास जैसे काले मेघ उमड़ आए। देखते-ही-देखते मरुभूमि की तपती रेत भीग कर ठंडी होने लगी और ठंडी रेत से उठने वाली सौंधी खुशबू के साथ-साथ उसमें सजगता के अंकुर भी फूटने लगे। 'योजना निर्माण काल' की कल्पना को जब साकार होते देखा तो मन मयूर भरपूर लय में नाचने लगा। दुआ के लिए हाथ आसमान की ओर उठ गए।

'योजना-निर्माण' कालोपरान्त उसके क्रियान्वयन में भूकम्प, तूफान, आंधी और मासदी के पूर्व की शांति और बाद की भीषणता को देखा, सहा, भोगा और उससे बहुत कुछ सीखा। अडिगता और दृढ निश्चय से कठिन-से-कठिनतर बाधाओं पर सेतु बन जाते हैं और श्रेष्ठता का मार्ग प्रशस्त हो जाता है।

समाज के फोड़े की शल्य-क्रिया कर टाके पिरो दिये हैं, शब्दों के धागों से। विषाद के फोड़ों पर सृजन की दवा लगा दी है। प्रयास में कैसी महक है; मरहम में कैसी ठंडक है। इसका निर्णय तो आप करेंगे ही। कागज के टुकडों पर उतारे हुए शब्दों की एक माला बनाई है। 'शब्द महल' को सजाया-संवारा है। आपका शत्-शत् स्वागत है।

इस दौर में कुछ कटु और कुछ मधुर अनुभवों का भी स्मरण हो आता है। 'मरुधरा साहित्य परिषद' के अंकुरण से लेकर पल्लवन तक हमारी मानसिकता में कई उतार-चढ़ाव आए। कुछ समीपस्थ साहित्य जनों की ईर्ष्या का भी कोपभाजन होना पडा। किन्तु हमने उसे समालोचना की चादर बनाकर ओढ़ लिया। पार्श्व में छुपी निरर्थक बातों को हमने वहीं दबा रहने दिया। प्रतिस्पर्धा और कोरे स्वाभिमान के कारण बहुत से मुद्दों से सनक की बू आती रही किन्तु हमने सम्मान और परिश्रम के पौधे से पर्यावरण को शुद्ध करने का प्रयास किया। जहां एक ओर सटीक साहित्य से मरु को सींचा है, लघु रचनाओं को दिशा, नवोदितों को एक मंच प्रदान करने का प्रयास किया है, वहीं दूसरी ओर स्थापित लेखकों के सान्निध्य से

सफलता की सीढिया चढने का प्रयास किया है।

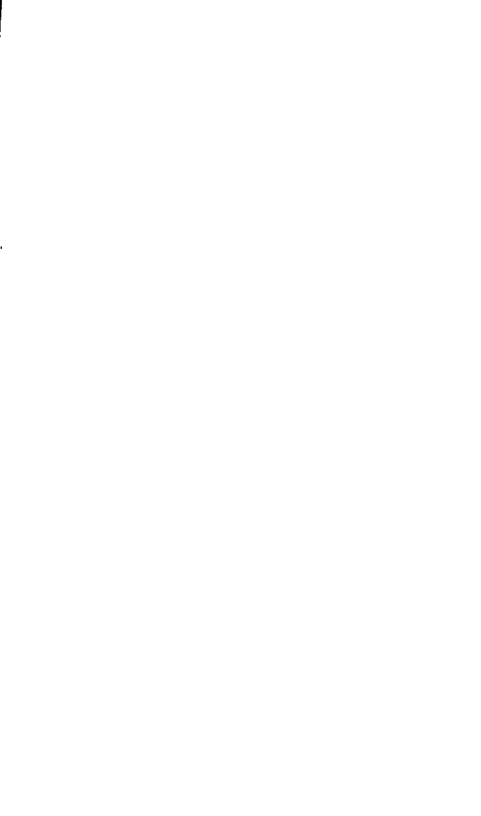
सटीक एवं श्रेष्ठ साहित्य का आधार परिपक्वता है, न कि अनर्गल प्रलाप अथवा प्रतिस्पर्धा। केवल क्लिष्ट शब्दों का मजमा लगा लेना ही परिपक्वता की कसौटी नही है अपितु भावो की सटीक अभिव्यक्ति ही परिपक्वता का मूल आधार है। हमारे लक्ष्य का सबसे बडा उद्देश्य 'साहित्य परिवार' में सहयोग एवं निष्ठा का वातावरण तैयार करना रहा है।

'मरुधरा साहित्य परिषद' रचनाधर्मिता की बुनियाद पर दायित्वो को मद्दे-नजर रखते हुए भविष्य मे विविध साहित्यिक कार्यक्रमो तथा अन्य लेखकीय मच-निर्माण हेतु कार्यरत एव समर्पित है। अपने उद्देश्य की मंजिल तभी प्राप्त होगी, हमारा श्रम तब ही सार्थक होगा जब आपके अमूल्य एवं समालोचनात्मक सुझाव हमे प्राप्त होगे। केवल यही एक दायित्व हम आपको सौंप रहे है। यथा समालोचना की प्रतीक्षा।

—संपादक मंडल

अनुक्रमणिका

कविताएं



मरु का मायावी संसार

□ डॉ० पुरुषोत्तम आसोपा

अरे ! मरु का यह मायावी संसार।

अथिर चंचल
नव्य प्रतिपल
थिरक झिरझिर
झिरझिराती रेत का व्यापार।

रूप अनगढ
स्तूप-सी चढ़
उदित फिर फिर
बन बिगड़ती माटी की दीवार।

मिलित छन छन
भव्य कन कन
त्वरित उठ गिर
खिर बिखरती वालू का संचार।
अरे ! मरु का यह मायावी संसार।।

124, बिन्नाणी बिल्डिंग,
फुलबसागर, बीकानेर

आओ भूमिका लिख दें

☐ हरीश भादानी

याद है न, अधे राज के दरबार में
गंदले सोच की स्याही घुली भी
मामा ने थमाये थे
राज के करमुकरवों के हाथों कलम
देवर ने भौजी को निर्वसन करते हुए
लिखी थी भूमिका
हुआ ही, आगे जो होना था
हुआ था न, बोलो न मोगामंडियो
हुआ था न महाभारत
हजारों साल बाद
आज तो उससे भी बड़ा दरबार
चारों ओर सोच उफने पनाले
मामाओं की इत्ती बड़ी ब्रिगेड
फड़का लो मसे, थाम लो कलमें
ओ रक्तबीजी देवरो !
एक क्यों हजारों भौजियों की भीड़
आओ झेलम के कपड़े उतारें
गंगा से करें जबरजिन्ना
कामाक्षा पर धार मारें
वैष्णों की घाटी में
गुनगुनाती हवाओ का गला दाबे
मांस के गूदे को इस तरह पीटें, पसारें, कि
सूफियों, कबीरों, नानकों के होने के सपन का

बीज तक मर जाये
फिर तो हो ही जायेगा
आगे जो होना है
आओ ! शुभ घड़ी है
दूजे महाभारत की
लम्बी-सी भूमिका लिख दें
देश, जाति, धर्म का क्या देखना है
अब तो दुनिया को दिखाएं—
जड़ भरत हम
कच्चे मास लोहू से भी
भर लिया करते है अपना पेट
भूख आखिर भूख है
किसिम कोई भी हो भले !

छबीली घाटी, बीकानेर (राजस्थान)

दो "मैं"

□ डॉ० राजानन्द भटनागर

तुम्हारे "मैं"
और मेरे "मैं" में
वही फर्क आता है
जब तुम लाडले की तरह
उसे चौखट पार नही करने देते
मैं, उसे भेज देता हूं कूचे-बाजार
कि रसे-बसे।
तुम्हारा "मैं"
उम्र पाकर नाबालिग रह जाता है
मेरा, कुछ और परिपक्व, परिष्कृत।
मेरी रचना के स्वर
दूसरों की तहें छूते है
तुम्हारे, अपनी गुंजलक में
गुन्छे रह जाते है।

रत्ताणीं व्यासों का चौक, बीकानेर

बार-बार कविता

☐ जनक राज पारीक

अपनी बदसूरती के कारण
आज भी ज़िन्दा है मेरी कविता
जब कि अणचली को
उसकी खूबसूरती खा गई।

इसे संयोग ही समझें
कि पति की मौत पर आंसू बहाती
अणचली की खूबसूरत आंखें
छोटे ठाकुर को भाग गयी;

जो आगे चलकर
उसकी मौत का कारण बनीं।
अब इस सार्वजनिक मौत पर
क्या कहे मेरी कविता
और क्या कहेंगे आप ?
जब कि पोस्ट-मार्टम की रिपोर्ट ही
कुछ नहीं कहती।
कहती हैं

भयभीत बस्ती की सहमी-सहमी आंखें
कि विवस्त्र पड़ी अणचली के
केवल होंठ ही लहूलुहान थे
यह कहने का साहस कौन जुटाए
कि उसके गले पर

छोटे ठाकुर के अंगूठों के निशान थे।
कौन कहे/कि छोटा ठाकुर
उसकी लगातार ना-नुकर से
तंग हो चुका था/और उसके साथ हुए
आखिरी जंग में
मौत से कुछ ही क्षण पूर्व
अणचली का शील/भंग हो चुका था।

अब इस सार्वजनिक मौत पर
क्या कहे मेरी कविता
और क्या कहेंगे आप ?
आपके पास कहने को
पनघट है/पायल है/मौसम है/प्यार है,
गोरी-गोरी बाहें
और अंबुआ की डार है।
कुंठाएं हैं/सत्रास है/अतृप्त यौन
और लगातार सहवास है।

अणचली की मौत
समाचार-पत्रों की
उपेक्षित सुर्खी है।
उसे पढ़े/बहस करे।
अणचली जैसे लोग
रोज जन्मते है/ रोज मरते हैं
और आप जैसे कवि/कॉफी पीकर
पेशाब की तरह
कविता करते हैं।

प्रधानाध्यापक, ज्ञान ज्योति उच्च माध्यमिक विद्यालय,
श्रीकरणपुर-335073 (राजस्थान)

जीना सीख लिया

□ ओम पुरोहित 'कागद'

जब भी मैं
सोचों के तालाब में
स्मृति का/पत्थर फेंकता हूं

लहरें खाता दुःख/हृदय के
किनारे आ लगता है
...और मैं उसमें
पंजों/घुटनों/कमर/सीने तक
उतरता चला जाता हूं।

मेरा अस्तित्व
मेरे जीवित होने का प्रमाण;
मेरी आंखें
सब लहरों में खो जाते है,

तब/मेरा जीवट/जीवन्मृत हो
जीविका के लिए/जुट पड़ता है
दिन भर की मेहनत के बाद
पाता है
एक अनोखी सोच का सेला, जो—

अपनी नुकीली नोक के
भय के आगे नचाता है
...और फिर एक दिन
छोड़ आता है/किसी पसरे हुए

तथा/भागते हुए लोहे के बीच
लेकिन तभी समय आता है
दांत किटकिटाता।
मुझे यह आभास तक नहीं रहता कि,
यह मेरा/घातक है या पालक।

दबाव में आकर
मैं समझौता कर लेता हूं।
रात गुजर जाती है
घर के ही पलंग पर।
सुबह !

मां/बाप/भाई/बहन/बीवी
पड़ौसी एवं मित्र
एक ही स्वर में बोलते हैं
यदि बेचारा/निरूढ़/निपूता होता, तो—
आज/कल की बात होता

लेकिन यह/जीने की कला जान गया
छल के बल/उमर काट देगा, पोच !
मेरी सोच/जीवन्मुक्त होने के लिए
छटपटाने लगती है

...और गिर पड़ती है
मेरे पैरों के बीच स्मृति... फटक !
तभी तन्द्रा भंग होती है/तब मैं
एक ही झटके से/उसे उठाकर
आंख मीचकर
भविष्य के अंध कूप में
फेंक देता हूं।

तब मुझे सिखाता है समय
कमर के बल चलना
आंख के बल खाना

हाथ केवल बोलना !
मुंह पराधीन कर दिया
बेटों की तरह/किसी के आगे
अपने ही अपराध के लिए,
जो देता है/रोटी !
बस, अब मैंने/जीना सीख लिया।

24, दुर्गा कॉलोनी
हनुमानगढ़ संगम-335512 (राजस्थान)

एक चिड़िया की मौत

□ रामस्वरूप परेश

और भी तो थे
सब चुप थे
उसका अपराध सिर्फ इतना ही था
कि वह
मौसम के इश्तिहार की भाषा
समझती तो थी
पर चुप नहीं रह सकती थी

उसने कहा—
धर्म की पुस्तक को
तलवार से रेखांकित करना
और हथेलियों को हाशियों में बांटना
शाम की प्रार्थना की भांति
हमेशा की तरह
हवा में उड़ नहीं सकता

बस उसने इतना ही तो कहा था
इस मौसम में दम घुटता है
नये सूरज के उगने तक
रोशनदान की तलाश जारी रखूंगी
और वह
उगते हुए दिन से पहले
आग भरी झाड़ियों के बीच
मृत पायी गई

क्योंकि सच लोग देखते तो हैं
कहते नहीं हैं

और भी तो थे
सब चुप थे
उसका अपराध सिर्फ इतना ही था
कि वह
मौसम के इश्तिहार की भाषा
समझती तो थी
पर चुप नहीं रह सकती थी।

पीरामल उच्च माध्यमिक विद्यालय
बगड़, झुंझुनूं (राजस्थान)

मन्थन

□ डॉ० उमाकांत गुप्त

रात के अन्धकार में
एक उल्लू बोला—अरे ओ आस्तीन के आदमी
कितने फरेबी हो तुम !

देते हो जहर—बनकर नारी विष्णु
इस मथित जगत में
देते हो पूंजी का अमृत

और···
और काटते हो
गला अगणित राहुओं का
पैदा करते हो असंख्य राहु केतु
विषमता के गर्भ से

क्यों, क्यों !
यह विभेद क्यों ! ?"
और मैं···

सुनकर
कभी आकाश और कभी स्वयं को देखता
कहीं मार्ग लिये
[illegible] के मन रेंगनेवाली धारों—
की भांति
कभी इधर और कभी उधर
बहते रहता हूं

बोझिलाता प्रस्थान करता हूं
उसमें साग्री रेत का घरोंदा
बनाकर उसी में विलुप्त हो जाने को
कि लोग कह सकें --
'गुम शुदा की तलाश है'।

सरणा सदन, जैल वेल
बीकानेर

पुरानी कमीज

□ नरेश विद्यार्थी

आज हमारी मानसिकता
कितनी सिकुड गई है—
वर्फ की तरह जम गई है—
हम कोरे स्वाभिमान के
फावड़े, गैती, हाथों मे थामकर
चल पड़े है,
काटने
तूफान को/शहर को/वीरानगी को
और सम्बन्धों को—
हम अपने कृतित्व की
आलोचना सहन नही कर पाते
फिर भला क्या औचित्य है
उस कृति का—
किसी उड़ती हुई तितली को
अपनी मुट्ठी में बन्द कर
अपनी हथेलियों के रंग से
तितली के परों को रंग डालते है
मगर अपने अलाप पर
खुद ही तवला बजाते है
खुद ही सुर निकालते हैं—
यह
आपाधापी की फसल हमी उगाते है—
कृतित्व की बुराइयां

हमीं से उपजती हैं—
निठल्ले बैठकर
अपने आप को गरीब की संज्ञा देते हैं,
किन्तु इसके लिए
किसी परिश्रमी की कनपटी पर
रिवाल्वर रखकर
धमकाने का क्या औचित्य है—
कुएं में रहकर
मेंढक की तरह

हम
अपने सामर्थ्य को ही
अपनी पहुंच को ही
सबसे बड़ा दरिया मानने लगते है
दारू पीकर
दायित्व के शब्दों को हवा में उछालते है,
जिम्मेदारियों का जुआ उतारकर
भूखे पेट
समाजवाद लाने का नारा लगाते है
अपनी अक्ल को गिरवी रखकर
साहूकारी जताते हैं—

उम्र की धूप
दीवारें फांदकर
क्षितिज की ओर
सूरज की तरह ढल जाती है—

हम उग्रवाद की लाठी
पैरों में बांधकर
शहीदों की फेहरिश्त में
अपना नाम दर्ज करवाने की सोचते हैं—
आधुनिकता के जहर से भरा हुआ
इजेक्शन

एक सादी सी कमीज में
खोंस दिया गया है
और छिद्रों के बीच
भीतर का नंगापन झांकने लगता है।

द्वारा—गिफ्ट हाउस
हनुमानगढ़ संगम-335512

पीड़ा

□ डॉ० मदन केवलिया

बरफ-सी पिघलती है
आखों में जमी पीड़ा ।

निर्मोही मन बना नही
रास्ते के पेड़ों-सा
दर्द कब जना नहीं
वक्त के थपेडों-सा

बोझा ही लगती है
सांसों की हर क्रीड़ा ।...

फुटपाथों पर पड़ा नहीं
हसता मेरा साया
अपनी की गर्मी से
दूर रही काया,

रेत-सी जलती है
अन्तर्मन की पीड़ा ।

पार्वती सदन, कोट गेट
बीकानेर—334001

तलाश

□ डॉ० देविन्दर विमरा

अब कोई नई बात पूछो।

बार-बार
हालचाल पूछा जाना
अब अच्छा नही लगता

मत पूछो
दिल्ली-पंजाब की
या दिल्ली और पंजाब से
बाहर की
धरती पर
दुर्गंध कैसी है

मत पूछो
धर्म और इन्सान की बातें
इन्सान का इन्सानियत से
नाता टूट चुका—
दरारें और खाईयां है
सब तरफ

नही नहीं
सत्ता की बात मत करो
दफ्तरो-विद्यालयों
महाविद्यालयों

दुकानदारों-अस्पतालों की बातें भी
क्यों करते हो
स्वयं ही अपने को उघाड़ते हो

स्त्री-पुरुष, पति-पत्नी
बहन-भाई, भाई-भाई
प्रेम प्यार
सगे-सम्बन्धियों के अस्तित्व को
सब जानते है
खून की होली
सब खेलते हैं

उन्नीस सौ सैंतालिस ?
फिर से !

हत्या, हत्यारे
धोखाधड़ी, अत्याचार
छल-कपट से पाला पड़ता है !
सब, पुरानी बातें है—

अब कोई नई बात पूछो।

हीरा कुटीर, मोहल्ला बड़ूगर,
पटियाला—147001

पंचरंगे फूल…

☐ शोभाकर

इस उपवन में
गुलाब
गेंदा
चमेली
सदाबहार
सूरजमुखी के पुष्प
खिलते रहे है
साथ-साथ
पौधों पर।

आने लगा है
बहकर कही से
गन्दे नाले का मैला पानी
घुसने लगी है
प्रदूषित हवा
इस उपवन में
और
उगने लगे हैं कांटे
फूलों की पत्तियों पर
एक पौधे के फूलों की पत्तियों के गिर्द उगे कांटे
दूसरे फूलों की पत्तियों को
नोचने लगे हैं।
असह्य बन गया है

दूभर हो गया है
इन पुष्पों का
आसपास रहना।

गुलाब नहीं चाहता अपने आसपास
गन्दे को
गेंदा चमेली को
चमेली सदाबहार को
सदाबहार सूरजमुखी को
सूरजमुखी के फूल की पत्तियां
अब सूरज की रोशनी में भी
सिमटने लगी हैं।
प्रत्येक
चाहने लगा है
अपने लिए
अलग क्यारी।

रोकना होगा
आता हुआ मैला पानी
बन्द करना होगा
गन्दे नाले का प्रवेशद्वार
रोकनी होगी
घुसती हुई
प्रदूषित वायु
तभी
खिल पायेंगे
पचरंगे फूल
हर उपवन-उपवन
हर क्यारी-क्यारी
और
एक दूसरे के आसपास।

रामदत्त की गली, बिचला बाजार,
भिवानी—125021 (हरियाणा)

वक्त का तकाजा

□ हरि हर्ष

अतीत के पन्नों को मत पलटिए
आपके, मेरे, उनके
रिश्तों को मत कुरेदिये।
बुद्धि का भुनाना
मर्यादा को ठेस दे सकता है।
अच्छाई को ढंक सकता है।
हुआ जो—जानते हो
दुःख भूल, सुख का ढिंढोरा पीटते हो।
बिगड़े को बनाया है
बिखरे को सजाया है
कमजोर सबल को यूं न देखे
नैतिकता की टोली, लपटें न रखे
सुन्दर माला का टूटना बुरा होगा
विशाल को लघु देखना दु:खद होगा
वक्त का तकाजा है
मानवता को विश्वास का हार पहना दो
अनेक को तोड़, एक बना दो
घावों पर पट्टी कर दीजिए
अतीत के पन्नों को ढंक दीजिए।

द्वारा—भोला महाराज,
माहतो का चौक, बीकानेर

खेल

□ भुवनेश जोशी

वहुत खौफनाक खेल है
दोगलों के चेहरों से
नकाव खेंच लेना
भीतर कितनी ही
अच्छाइयों के रेशे
हिलगे रहते है
नसों की मानिंद
पोसते है बुराइयां,
और नकाव खिचने पर
अच्छाई वहुत वीभत्स ढंग से
लेती है बुराई की जगह
मानो वह अच्छाई न हो
साबुन का झाग हो
और हम हों वच्चे
जिसकी आंखों में
घुस गया हो
साबुन।

राजभाषा अधिकारी
यूनियन बैंक आफ इण्डिया
क्षेत्रीय कार्यालय
रसल चौक, नेपियर टाऊन
जबलपुर, (म० प्र०) 482001

सड़क बनाम बंधुआ मजदूर

□ महेश संतुष्ट

मैंने
सड़क के सीने पर
एक घटनास्थल देखा है।
जहां भीड ने
भीड़ को नहीं
सड़क को कुचला है।

मैंने
सड़क को
किसी थके हुए आदमी की तरह
तारकोल के नीचे
औंधा लेटे देखा है।

और देखा है
सड़क को
किसी बंधुआ मजदूर की तरह
ऊंची हवेली के
आंगन तक
साहूकार का वजन ढोते…!

द्वारा—कुन्दन लाल उदय कुमार
हनुमानगढ़, 335512

मुझे पहचानिए

□ डॉ० श्याम सुन्दर दीप्ति

मैं नक्षत्र हूं—
धरती की तरह
मेरे अपने उपग्रह हैं
मेरा अपना घेरा है
मैं शून्य नही हूं
मेरा भार धरती महसूसती है
जमीन पर चलते हुए—
मेरे पांव निशान छोड़ते हैं
मैं भीड़ नही हूं
मैं एक चेहरा हूं
जिसकी अलग पहचान है
जिसकी अपनी [illegible] है
मुझे शून्य मत पुकारिए।
मैं जिन्दगी के नाटक का
एक अहम पात्र हूं
मैं अपने समय के इतिहास का
एक जीवित पृष्ठ हूं
मैं स्पन्दित हूं
मैं [illegible] हूं
अब मुझे शून्य नहीं पुकार सकते
[illegible] के बीच सेतु हूं
[illegible]!
[illegible]!

मेरी धड़कन !
मेरी सांस !
तीनों समय-सापेक्ष में गूंजती हैं।
मैं शून्य कतई नहीं हूं ।
मैं अंश भी नहीं हूं
सम्पूर्ण हूं !
मुझे अपनाइये
मेरे बिना आपका
आपके बिना मेरा वजूद अधूरा है
आप जानते हैं
मगर मानते नहीं
आपको मुझे अपनाना होगा
मेरे बिना जीने की भूल—
आप कर सकते हैं—
मैं नहीं।

रजिस्ट्रार
एम० पी० एम० विभाग
मेडिकल कालेज, पटियाला

धुंधले प्रतिविम्ब

□ भंवरसिह सहवाल

निस्संग विचारों की सड़कों पर नंगे पांवों
स्वच्छन्द घूमते हुए अजाने हिप्पी-मन
गांजे-चरसों में डूब गये
जीवन से कितने ऊब गये !

बीमार खाट पर पड़ी जिजीविषा
देख रही भीषण सपने
अपने-अपने शव से लिपटी
आत्माएं कितनी रोती हैं;
चुपचाप अंधेरे आंचल में
हत्याएं कितनी होती है !

निज भूगर्भी गोदामों में ताला ठोके
कुत्सित व्यापारिक मनसूबे
बेखटके लटके चेहरों से
कृत्रिम अभाव पैदा करते है श्वासों का
है हाल बुरा बाजारों में विश्वासों का।

चुपचाप काम में लगे हुए मानवता के तस्कर कितने
सीमावर्ती हर अंचल में
वे खूब ठाठ से जीते हैं,
रंगीन रात के कोठों पर
वे जमकर दारू पीते है।

भय-कोलतार से पोत जिन्दगी के अक्षर
श्मशानी घुग्घू की आंखें अभ्यस्त
रात में दुगुनी चमका करती हैं;
भूखी-प्यासी-बेहाल-भावना-हवा
बिलखती दर-दर मारा फिरती है।

मण्डी विकास (II) 2,
हनुमानगढ़ जंक्शन-335512

युग-परिवर्तन

□ कुलभूषण कालड़ा

बूढ़े समय की चाल मे
कोई परिवर्तन नहीं आया
हां उसने
आधुनिकता का
आवरण ओढ़
अपनी ढाल
अवश्य बदल ली है
कल के वरदान
आज
अभिशाप सिद्ध होने लगे हैं
लोग अन्धा-धुंध
सभ्य औपचारिकताएं
ढोने लगे हैं
देवताओं की उपलब्धियां
मनोरंजक कहानियां
बन गई है
प्रकृति ने भी
अपने नियम
बदल लिये हैं
धर्म की परिभाषाओं में
परस्पर ठन गई है
स्वार्थ की छूट
फैलने से

भय-कोलतार से पोत जिन्दगी के अक्षर
श्मशानी घुग्घू की आंखें अभ्यस्त
रात में दुगुनी चमका करती हैं;
भूखी-प्यासी-बेहाल-भावना-हवा
बिलखती दर-दर मारा फिरती है।

मण्डी विभाग (II) 2,
हनुमानगढ़ जंक्शन-335512

युग-परिवर्तन

□ कुलभूषण कालड़ा

बूढ़े समय की चाल मे
कोई परिवर्तन नहीं आया
हां उसने
आधुनिकता का
आवरण ओढ़
अपनी ढाल
अवश्य बदल ली है
कल के वरदान
आज
अभिशाप सिद्ध होने लगे हैं
लोग अन्धा-धुंध
सभ्य औपचारिकताएं
ढोने लगे हैं
देवताओं की उपलब्धियां
मनोरंजक कहानियां
बन गई है
प्रकृति ने भी
अपने नियम
बदल लिये हैं
धर्म की परिभाषाओं में
परस्पर ठन गई है
स्वार्थ की छूट
फैलने से

सधिछेद हो गए है
सम्बन्धो मे
सभी आस्थाए
भौतिकता में
ढल गई हैं
कभी आकाश धरती
मिलने में असमर्थ थे
मगर
अब लगता है
सदियो पुरानी
ये धारणाएं
बदल गई है।

एम-2, तेज बाग कालोनी
सन्नौर रोड, पटियाला

दर्द

□ दीनदयाल शर्मा

पिघल जाओगे तुम
बर्फ की मानिंद
पहुंचने लगेगी जब तुम तक
मेरे दर्द की गर्मी ।
गर्व उसे भी था
अपने आप पर
जो पत्थर दिल
और भावमुक्त था
पर—
मेरे मन की गहराइयों में
जब वह उतरा
तव प्याज के छिलकों-सा
मेरा दर्द
उसमें उतरता चला गया
मैं हल्का होता रहा
वह फफक पड़ा था
आखिर क्यों ?
क्या उसको थी मेरे प्रति
कोई सहानुभूति !
या उसके मन को
छू गई [illegible]
मेरी प्रस्तुति !
या फिर

संधिछेद हो गए है
सम्बन्धों में
सभी आस्थाए
भौतिकता में
ढल गई हैं
कभी आकाश धरती
मिलने में असमर्थ थे
मगर
अब लगता है
सदियों पुरानी
ये धारणाएं
बदल गई है।

एम-2, तेज बाग कालोनी
सन्नौर रोड, पटियाला

'सार्थक'

□ रणजीत वर्मा

चारों तरफ बिखरे विषय
असमंजस में पड़ी,
लेखनी ने पूछा—
'किस पर लिखूं'?
'मुझ पर लिखो'
—अचानक भीतर का दर्द कराहा
'नही' मैंने धीरे से कहा—
तुम पर नही लिखूंगा
तुम्हीं ने तो लिखना सिखाया है।
तभी दीये ने इठला कर पूछा—
मुझ पर लिखोगे ?
मैंने मना कर दिया—'नही'
तुमने कहां रास्ता सुझाया है ?
अंधरे को तो तुमने अपने नीचे छिपाया है।
फिर चरित्र पर लिखने का विचार आया
पर मन ने शांति से समझाया—
उसे भी रहने दो
उसका तो अब विश्वास ही नहीं रहा है
तभी ईमान बोल पड़ा—
अरे मुझ पर लिख लीजिए
'क्या' मैंने आश्चर्य से पूछा—
तुम अभी बाकी हो ?
अचानक

उसे भी यही गर्ज होगा
जो मर्ज था मेरा
''यकीनन
यही रहा होगा।

जोगी भरत, रावतपुर (राजस्थान)

'सार्थक'

□ रणजीत वर्मा

चारों तरफ बिखरे विषय
असमंजस में पड़ी,
लेखनी ने पूछा—
'किस पर लिखूं' ?
'मुझ पर लिखो'
—अचानक भीतर का दर्द कराहा
'नहीं' मैंने धीरे से कहा—
तुम पर नहीं लिखूंगा
तुम्हीं ने तो लिखना सिखाया है।
तभी दीये ने इठला कर पूछा—
मुझ पर लिखोगे ?
मैंने मना कर दिया—'नहीं'
तुमने कहां रास्ता सुझाया है ?
अंधेरे को तो तुमने अपने नीचे छिपाया है।
फिर चरित्र पर लिखने का विचार आया
पर मन ने शांति से समझाया—
उसे भी रहने दो
उसका तो अब विश्वास ही नहीं रहा है
तभी ईमान बोल पड़ा—
अरे मुझ पर लिख लीजिए
'क्या' मैंने आश्चर्य से पूछा—
तुम अभी बाकी हो ?
अचानक

बाहर से शोर सुनाई दिया
भ्रष्टाचार, महंगाई और बेरोजगारी
आपस में झगड़ रही थी
और, निखरवाने के लिए
अपने-अपने दावे पेश कर रही थी
मैं सम्पूर्ण शक्ति लगा कर चिल्लाया—
तुम सब जाओ
तुम पर सीमा से अधिक लिखा जा चुका है
पर तुमने ढीठता दिखाई है
और न मिटने की शपथ खाई है।
तभी आत्मा ने चेताया
सुनो, मेरी आवाज सुनो,
मेरी आवाज को स्याही बनाकर, कागज के कोरे पन्नों पर
बिखेर दो
कुछ तो साकार कर दो।

जे-3, नहर कॉलोनी
फरीदाबाद-16ए

राजियै नै दूहा

□ मोहन आलोक

(1)

सुणजै वैठ सुरग
हूं'ज सुणाऊं हूंस सूं
अजकालै इण जग री
रीत अणहूती, राजिया !

(2)

हाकम हुया हराम
कल्तरकिया कूकर हुया
करें, करें तो काम
राळयां टूकड़ो, राजिया !

(3)

रिस्पत री रम झोळ
बाजै च्यारूं वारणां
पै'ला दूसड़ी पोल
रै'ई कदै नी, राजिया !

(4)

रिपियो हुय्यो राम
भौतिकता री भीड़ मांय
मिनखपणो बेदाम
रूळतो डोलै, राजिया !

(5)

चोखा हुवै चुणाव
चोर चुणीजै चौधरी
दारूड़ी रा दाव
रात्यूं चालै राजिया !

(6)

कवि गण हुआ कुमत्त
चुग्गै पर चम्पू रचै
सुरसत सुधा सत्त
रेत रळावै, राजिया !

(7)

जिका नीति रा थोक
कृपाराम रितड़िया कै'या
शेष मोहन आलोक
खबर बिचारी, राजिया !

नगरपरिषद,
श्री गंगानगर (राजस्थान)

मायड़ भासा

□ मनोहर सिंह राठौड़

भाजग्या अंगरेज'र
गयो वां रो राज
कित्ताक दिन खोर्‌यां जास्यो
वां दाफड़ां री खाज
डील स्यूं कपड़ो सिरकातां
कत्ती आवै लाज
पण भासा रै मामलै मांय
सफा नागा हां आपां
इण रो
कद करस्यां इलाज ?

मिनख अर कबूतर

सैकड़ां कबूतर
डार बांध बैठ ज्यावै
अेकै साथ
अेक ठोड़ चुगो चुग लेवै
पण—
कबूतर मिनख नीं बण सकै,
जद;
मिनख कबूतर क्यूं बणै ?

जी-51, सीरी कॉलोनी,
पिलानी, जिला—झुंझनू (राजस्थान)

स्वप्न

□ राजकुमार त्यागी

क्षुब्ध ! क्यों हो आज इतने
बह गये क्या—
वो सभी,
अरमान, जितने पालते थे।
स्वप्न वो सब
जो कभी
आकाश में
उड़कर विचरते—
रह गये क्या—
वो सभी, जो पालते थे।
वे उमगें
वे कुचालें—
और वे सब—
नव सितारे,
हो गये क्यों ?
आज धूमिल
जो कभी
भू-से निकलकर
व्योम की ऊंची हवाओं को
छलांगें मारकर तुम
नांघते थे।

हनुमानगढ़ सगम

दफ्तर

□ उपेन्द्र जोशी 'उपवन'

दफ्तर,
जिसमें मजाक,
हंसी, चुहलबाजी,
और गप्पें होती हैं;
चाय के दौर होते हैं,
काम करने वाले हंसते
कराने वाले रोते हैं,
सिगरेट के धुंओं से
कुन्द वातावरण,
जहा से हो चुका
निष्ठारूपी सीता
का अपहरण,
कौन कहता है ?
दफ्तर में सद्भाव होता है;
बाबू होते हैं,
टायपिस्ट होती है,
अरे यह सब
नही रहते होगे,
यदि रहते हैं तो उसे
दफ्तर नही कहते होंगे।

वार्ड न० 19
गर्ल्स कॉलेज के सामने
बालाघाट (म० प्र०)

मांग

□ ओम पारीक

ओ सूरज !
इतनी तपिश दे
कि जल जाये पेट
भूखों का।
ताकि—
इनके मुंह से निकले आग;
रोटी की मांग नहीं।

इतनी तपिश दे
कि जल जाये चमड़ी
नंगों की।
ताकि
मवाद व पपड़ी
आवरण बन जाये
और कपड़े की मांग
हमेशा के लिए मर जाये।

पत्रकार, रावतसर,
जिला—श्रीगंगानगर (राजस्थान)

पीड़ित हृदयों में

□ श्रीकृष्ण पुरोहित

इन पीड़ित हृदयों में अब
नव उज्ज्वलमय भविष्य
आशापूर्ण दृष्टि से झांक रहा है।
उस गूढ़ तिमिर में व्याप्त
पीड़ित हृदयों को सुख सम्पन्नता
से लाद रहा है
यह नया भोर
जिसे हम गया-गुजरा जीवन
मान रहे थे उस जीवन में
स्वर्णिम भविष्य की सीढ़ी
टांग रहा है।

रेलवे कालोनी, पीलीबंगा
जिला—श्रीगंगानगर (राजस्थान)

शंका

□ शिवनारायण उपाध्याय 'शिव'

तुम
पानी की
लहर हो
जिसका
अन्त नहीं है।
तुम
विकास
और
प्रगति की
बाधक हो।
तुम्हारे
भंवर में
पड़कर
सशक्त
जीवन नौका भी
चूर-चूर
हो जाती है।

शिव सदन
तराना, जि० उज्जैन (म० प्र०)

वक्त

□ मनजीत सोहल

वक्त के,
भयानक पंजों में,
कराह रही है,
हर जिन्दगी !
अक्सर,
वक्त गुजर जाने पर ही,
कर पाते हैं, हम
वक्त का मूल्यांकन।
काश,
वक्त की चाल को,
समझ पाता,
ये इन्सान !
नहीं पहुंचता,
उस मुकाम पर,
जिस पर,
पहुंचा है, ये इन्सान !
वक्त को,
समझने वालों ने ही,
मंजिल पाई है।
भटकते फिर रहे हैं,
मुझसे,
समझ नहीं पाये है, जो,
वक्त के
विभिन्न चेहरों को।

ब्लाक एस-46 के पीछे, लोको कॉलोनी
हनुमानगढ़ सगम-335512

आज और कल

□ धीरेन्द्र छत्तहारवाला

हमारे पूर्वज बड़े गन्दे थे,
इसलिए
इन्सान को पहचानते थे ।
हमारी मां
साधारण-सी साड़ी पहनती थी,
इसलिए
हमारे पिताजी
भ्रष्टाचार से दूर थे
हमारे दोस्त
आम की बगिया में सुस्ताते थे
इसलिए
गाढ़े समय पर काम आते थे
हमारे शिक्षक नीरू
पुआल मांग कर लाते थे
इसलिए
विद्यालय भवन में शीतल छाया थी ।

स्टेशन रोड, बी. देवघर
जि० देवघर

इन्तजार

□ अशोक अग्रवाल

नीले आसमान के नीचे,
फुटपाथ पर बैठा हुआ,
हाथ में कटोरा लिये,
वह इन्तजार करता है।
कहीं कोई दया कर दे।
इस भूखे का पेट भर दे।
हर पांच वर्ष के बाद,
उससे वादा किया जाता है,
एक वोट के लिए उसे
हर बार खरीदा जाता है।
वह भी बिक जाता है क्योंकि
उसे इस दुनिया में जीना है,
फ्रिज, कूलर, कोठी, कार न सही
रोटी, कपड़ा, मकान तो पाना है।
जब तक वह जिन्दा रहेगा,
यूं ही अपने आपको बेचता रहेगा,
फुटपाथ पर बैठकर एक नई
सुबह का इन्तार करेगा।

सगरिया

'स्वाभिमानी मैं'

☐ भारत तनेजा

उदासी के बादलों में —
बिजली की चमक के तले कहीं
एक अक्स उभर आता है कभी,
फिर धूमिल पड़ते हुए उस अक्स में,
मुझे अपना ही चेहरा नजर आता है,
लेकिन उस प्रतिबिम्ब में और—
इस चेहरे में बहुत अन्तर है,
एक तरफ स्वाभिमानी मैं,
दूसरी ओर मेरा अस्तित्व खड-खंड होता हुआ,
समय के चक्र ने पहले चेहरे को,
दूसरे में पूर्णतया परिवर्तित कर दिया है,
मैं मन-ही-मन वास्तविकता का मूल्यांकन करता हुआ,
पहले और दूसरे चेहरे में फर्क ढूंढ रहा हूं।

225-23-फरीदाबाद

मृगतृष्णा-सी

□ मनजीत शर्मा

मृगतृष्णा-सी
छलती जाती
कैसी है वह अभिलाषा,

कभी विरक्ति
कभी सम्मोहन
पल-पल मरती जिज्ञासा,

अंसुवाई पलकों पर
फिरता
स्वप्न है कोई अकुलाता,

तुम आओ तो
जग जाती है।
फिर से एक नई आशा,

पढ़ पाते हो नहीं
मित्र क्यों
मेरे नयनों की भाषा ?

द्वारा—डायरेक्टर ऑफ एक्सटेंशन एजुकेशन
थापर हॉल
पंजाब एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी
लुधियाना (पंजाब)

नास्तिकता

□ के० के० चौहान 'किशु'

बात करते हो क्या
तुम खुदा की
करो तो बात जरा,
आज के इन्सान की
जो कि खुदा को भी
बाकायदा ताले-कुंजी में
बन्द रखता है
क्या तुम्हारा खुदा
अभी भी खुद
खुदा होने का
दम भरता है।

120-प्रेमनगर
करनाल (हरियाणा)

मैं खुदा नहीं हूं

□ सुदेश सोनी

आपने जब द्रोपदी का चीर हरण किया
तब मैं आपके समक्ष कृष्ण था ।
चौदह वर्ष का वनवास
राम बनकर मैंने ही भोगा था ।
वक्त हमेशा जिसके इन्तजार में रहता है
वही "मैं"—
आपके समक्ष साक्षात उपस्थित हूं,
इच्छित सम्बोधन दो आप ।
हर युग में मैं—
अपना रूप बदलता हूं ।
आपका तीसरा नेत्र ही
मुझे पहचान सकता है ।
अपने दिमाग पर पहाड़ रखो
अपनी सोच को रबड़ की तरह खींचो
और फिर निकालो अपने माथे का सांप ।
याद करो—
मैं वही सुकरात हूं
जिसे आपने जहर पिलाया ।
आपका यह सोचना कि,
मैं सूरज की तरह पिघल जाऊंगा—
एक ही घूंट में
समुद्र पीने जैसी बात है ।

हर बार "आपने" मुझे मौत दी।
जिसे आपने सलीब पर लटकाया
वह यीशु मैं ही हूं।
हर युग में व्यापक हूं
आपके जन्म-मरण का लेखा
मेरे पास है।
सृष्टि का रचयिता भी मैं ही हूं।
मेरी होंद अमिट है।
पर
मैं खुदा नही हूं
सच,
मैं खुदा नही हूं !

8/76 सोनी लॉज,
तरनतारन, अमृतसर (पंजाब)

यथार्थ

□ हनुमानदास भोजक

हम
बेतहाशा दौड़ रहे हैं;
किसलिए ?
केवल दाने के लिए
और उसे सहेजने हेतु करते हैं उपाय।
पर,
क्या सहेज सकेंगे ?
नहीं !
हमें खबर नहीं
सिर पर मंडराते काल की।
काल, जो लील जाएगा
सब कुछ।
जो सहेजा है,
नहीं रहेगा शेष।
रहेगा !
वही टूटा-फूटा बर्तन
जो करेगा घोषणा
हमारी सत्ता की।

आजीवन रोना है

□ आर० एस० दत्त

जो संबंध हमसे दूर रहा करते हैं
उनका जब भी कोई पत्र
हमें मिलता है
सत्य मानना
मन का कमल तब ही खिलता है—
जनम-मरण, बस जीवन क्रम है
कुछ मौतों को सहज भाव से हम
सह लेते है
किन्तु जवां का मरना वज्रपात सम सह लेते है—
दुख तो बांटे से नही बटता
सब का जीवन एक तरह नही कटता
बस। यादे इक सहारा रह जाती हैं
जो दुखियारे मन को सहलाती हैं—
यह जीवन तो विरह क्षणों का रिसता फोड़ा है
तुझ बिन
दुखियारे मन को समझो
आजीवन रोना है।

3103/35-डी चंडीगढ़

स्वर्णिम किरणें

□ रूपराम 'आशादीप'

स्वर्णिम-किरणें !
सूर्यास्त होने पर भी
भूमण्डल को
अपने तेज से
आलोकित किए हुए
अभी तक
जिन्दा हैं !
जिन्दा रहेंगी !
मानव को
सूर्योदय की
सलामी के लिए
उपस्थित रहना है !
संभालो !
अपने ही साये को
कहीं—
परछाइयों के बीच
लोप न हो जाये
इंसान इंसान से।
स्मृति-कलश पर केन्द्रित
किरणें कहीं अपने
सूर्य से विमुख न हो जायें !

जिला एवं सैशन न्यायालय,
श्रीगंगानगर-335001 (राजस्थान)

रस्सा-कशी

□ प्रह्लाद 'नवीन'

मेरे पास एक रस्सा है
जो कश्मीर से कन्याकुमारी तक
लम्बा है
आप सभी को अचम्भा है
उसका हर सूत
देश का हर नागरिक है
और
उसके तार-तार में एकता है
और उस
लम्बे रस्से में मजहबी आंटे हैं
जो हमने अपने आप छांटे है
उस लम्बे रस्से को
हम कभी असम समझकर
हम कभी पंजाब समझकर
हम कभी मेरठ समझकर
हम कभी बम्बई समझकर
हम कभी दिल्ली समझकर
हम कभी मुरादाबाद समझकर
आपस में खींचतान करते है
हमारी खींचतान पर
जब-जब भी ये दुनिया हंसी है
हमने कहा—
यह तो हमारे देश की रस्सा-कशी है।

भाटपुरा
प्रतापगढ़ 3212605 (राजस्थान)

मेरी नजर लग जाने दो

□ मनमोहन कृष्ण 'बन्धु'

कितनी बार कहा तुम से
करके शृंगार
रूप अपना
दर्पण में निहारा न करो।
क्या बोलेगा ये गूंगा दर्पण
हमें ही कुछ कहने दो
जंग खाई जुबां पर
वर्षों बाद कोई शब्द तो आने दो
खुद की ही नजर लग गई तुम्हें,
अब पल भर को अपने चेहरे पर
मेरी भी नजर लग जाने दो।

बैंक ऑफ महाराष्ट्र,
कोटा-324007 (राजस्थान)

रस्सा-कशी

□ प्रह्लाद 'नवीन'

मेरे पास एक रस्सा है
जो कश्मीर से कन्याकुमारी तक
लम्बा है
आप सभी को अचम्भा है
उसका हर सूत
देश का हर नागरिक है
और
उसके तार-तार में एकता है
और उस
लम्बे रस्से में मजहबी आंटे हैं
जो हमने अपने आप छांटे हैं
उस लम्बे रस्से को
हम कभी असम समझकर
हम कभी पंजाब समझकर
हम कभी मेरठ समझकर
हम कभी बम्बई समझकर
हम कभी दिल्ली समझकर
हम कभी मुरादाबाद समझकर
आपस में खींचतान करते हैं
हमारी खींचतान पर
जब-जब भी ये दुनिया हंसी है
हमने कहा—
यह तो हमारे देश की रस्सा-कशी है।

भाटपुरा
प्रतापगढ़ 3212605 (राजस्थान)

मेरी नजर लग जाने दो

□ मनमोहन कृष्ण 'बन्धु'

कितनी बार कहा तुम से
करके श्रृंगार
रूप अपना
दर्पण में निहारा न करो।
क्या बोलेगा ये गूंगा दर्पण
हमें ही कुछ कहने दो
जंग खाई जुबां पर
वर्षों बाद कोई शब्द तो आने दो
खुद की ही नजर लग गई तुम्हें,
अब पल भर को अपने चेहरे पर
मेरी भी नजर लग जाने दो।

बैंक ऑफ महाराष्ट्र,
कोटा-324007 (राजस्थान)

नज़्म

□ कु० उषा गर्ग 'किरण'

जब हमने लिखा खून-ऐ
जिगर से आपका नाम
तो आपने पूछा ये
नाम किसका है ।

जब दिल की धड़कन
धड़की प्यार के नाम पर
तो आपने पूछा ये
पैगाम किसका है ।

जब छलकी मदिरा
आंखों के प्यालों से
तो आपने पूछा ये
जाम किसका है ।

मगर खाक बिखरी जब
राह में आपकी
तो आपने न पूछा
ये अन्जाम किसका है ?

943, सैक्टर-10
पंचकूला (हरियाणा)

ग़म के फूल

□ कु० अनिता शर्मा

मेरे आंगन में ग़म के फूल खिले हैं
कोई आना न उन्हें लेने
अगर ले लिया तुमने उसको
छिप जाएंगे वो तुम्हारे दामन में
तड़फोगे पूरा जीवन
छोड़ेंगे न ये तुम्हें आखिरी दम तक
ये तो मेरे लिए, मेरे साथी हैं ये
खिलते है ये मुझे देखकर
यही 'ग़म के फूल' मेरी जिन्दगी हैं ।।

मकान न० 3464
बंद गली नारंग कालोनी
त्रिनगर, दिल्ली-110035

यहां से दूर चलो

□ राजीव भाटिया

यहां अंधेरा ही रहेगा दीपको
यहां से दूर जलो
यहां प्रत्येक पल जहर है
यहां से दूर चलो।

सुन पक्षियों का भी कलरव
मानव विकलता से नीरव
पक्षियो गाओ न यहां,
यहां से दूर चलो।

यहां कोलाहल ही कोलाहल है
हर भावना पर ठेस की दलदल है
यहा रहना मृत्यु है
यहां से दूर चलो।

घृणा वैमनस्य की सब ओर बातें
खामोश रहते जीवन पल गाते
यहां आवाज दफनाई जाती है,
यहां से दूर चलो।

518, फेज न० 4
मोहाली (चण्डीगढ)

उजाला

□ जगदीश राय 'तन्हा'

कौन कहता है अंधेरा इसे,
यही तो जिन्दगी का उजाला है।
मिले थे चन्द लम्हों के लिए अंधेरों में,
उन्ही लम्हों का उजाला है।

कौन कहता है अंधेरा इसे,
यही तो है जिन्दगी की रोशनी।
जिस रोशनी में पाया था सब कुछ,
उसी में खो दिया सब कुछ ॥

बहुत खलने लगी थी रोशनी तुम्हें,
कैसे सह लेता "तन्हा" ये सब कुछ।

वॉच मेकर, न्यू ओरियण्टल रेडियो,
हनुमानगढ़ संगम-335512

एहसान

□ टी० के० भास्कर

तेरे एहसानो की बोझ से,
इस कदर दवा हूं कि
कल अर्थी भी न,
उठा पायेंगे वे मेरी ।

तेरा एहसान न चुकाने
के गम में,
बेजान जिस्म भी
आंसू बहाएगा इतना कि,
भीगकर चिता भी
जल पाएगी न मेरी ।

द्वारा—टैगोर बाल निकेतन
हनुमानगढ जंक्शन

स्वप्न

□ विश्वेश्वर बठला

क्षण सोचा
पल समझा
पा लिया दुर्गम रास्ता
लांध लिये अजेय वन और पहाड़
पिया मिलन को !
बना मन को सुन्दर पक्षी
उड़ चला प्रेम नगर को
पिया मिलन—
सुख, दु:ख, रुदन
आज के, कल के सुन
शीघ्र मिलन का आश्वासन ले
पक्षी लौट चला
अपने कोटर को।
प्रात: परकटे की तरह
धरती पर हाथ रखे
पड़ा सोचता रहा
रात के
स्वप्न मिलन को।
पा सका
न पिया को
न पिया का घर !

कनिष्ठ व्याख्याता,
अंग्रेजी, रा० उ० मा० विद्यालय,
केसरीसिंहपुर-335027 (राजस्थान)

आग्रह

□ कु० विमल शम

मिलने की चाह
बरसों से रही है
हर मन में
क्षण भर के लिए मिलना
क्षण भर के बाद बिछुड़ना
कितनी बार घटता है
यह सब
समुद्र व लहरों के साथ
लेकिन फिर भी लहरें
निढाल समुद्र की बांहों से
बस, यही आग्रह करती है—
हर बार, कि,
ओ समुद्र के किनारो
मत धकेलो अपने से दूर
हमें केवल तुम्हारे
तटों से नहीं टकराना
बल्कि हमें
तुम्हीं में ही खो जाना है।
हमारी स्थायी "चाह" को
मूर्त रूप दे दो !

निसन हट न० 110/बी० न० 5,
एन० आई० टी०,
फरीदाबाद-121001 (हरियाणा)

याद तुम्हारी

□ गिरीशचंद्र 'पनेरू'

सुरभि व सुगन्ध अनुबन्ध,
चला मंद लेके खुमारी।
चीड़ के लम्वे ठिगने
हिल रहे है ठीक वैसे
वृक्षों के पात चिकने
हिलती पुतलियां ज्यों
चंचल दृगों की तुम्हारी।

नभ पर जुल्फ बनी
कही हल्की कहीं घनी
मेघ की चादर तनी
लग रही पगडंडियां है
सूनी मांग-सी कुंआरी।

खोल कर के अपने पाल
ताल पर चलती नावें
अरे! ऐसी मंथर चाल
जैसे कभी पवन हिलाये
हौले-हौले चुनरी तुम्हारी।

फैल रही डगमगाकर
पतली परत-सी धुन्ध
गाल को छूकर निकली
हल्की जलधार मंद
दिलाती है याद तुम्हारी।

S/O श्री पी० बी० 'धनेह'
15/6 सुभाष नगर
हल्द्वानी नैनीताल (उ० प्र०)

छणिकाएं

फंदे

□ प्रमोद कुमार 'मनसुखा'

स्वेटर बुनते-बुनते
अपनी सहेली से बोली—
मिसेज खरबन्दे,
तुमने अपने पति के
गले में डाले कितने फंदे।
उत्तर में बोली सहेली—
मैंने तो फंदे डाले गले में
एक सौ सत्तर इकट्ठे,
तुम डालना एक सौ अस्सी
क्योंकि—तुम्हारे
पति हैं कुछ हट्ठे-कट्ठे।

131-राज पार्क सुल्तानपुर एक्स०
नई दिल्ली-110041

नवीनता

□ शीतल धूड़िया

एक कवि महोदय ने
कविता लिखी
'पुलिस वालों ने

एक अबला युवती की
इज्जत लूटी'
सम्पादक ने
उसे खेद सहित लौटाया
विशेष 'नोट' लगाया
'इसमे कोई नवीनता नही है।'

द्वारा—मकरन्द म्यूजिक सैन्टर
कमला नेहरू मार्केट, हनुमानगढ़ सगम

विश्व शान्ति

□ वी० एल० नगनी

बड़े देश
विश्व शांति का
दम भरते हैं।
छोटे देशो को
अस्त्र-शस्त्र दे,
अपनी अनैतिकता नही
बल्कि
व्यापारिक मामला कहा
टाल देते हैं

1753/30-ए, चण्डीगढ़

संसार

□ ओमप्रकाश उनियाल

क्या हुआ ?
हत्या…!
ऊंह…!
यह तो—
आता-जाता
संसार है।

417, गणेश नगरी गली प्रथम
शकरपुर-दिल्ली-110092

आधुनिकता

□ पवन पुरोहित

वे
आधुनिकता का दम भरते हैं।
तभी तो—
ड्राईंग रूम में
कैक्टस (थोर) सजाते हैं।

24-दुर्गा कॉलोनी
हनुमानगढ़ संगम-335512

शान्ति है

□ किशोर खुराना

देश
प्रदेश
शहर
गली-कूचों
सम्प्रदायों में नहीं,
सरकारी रिपोर्टों
सरकारी वक्तव्यों
दूरदर्शन और
आकाशवाणी पर !

285, विनोबा बस्ती
श्रीगंगानगर

कर्फ्यू

□ अजयपाल कौर

धूप की नंगी बाहें
जब
समय के कुछ पलों को
लपेटने को बढ़ी, तो
सूरज दरबार से
उठ गया
और—
आसमान में कर्फ्यू लग गया।

जी० टी० हाउस, रेडियो स्टेशन के सामने
जालंधर शहर (पंजाब)

दो क्षणिकाएं

□ कु० मीनाक्षी गौड़

ग़म

एक अंगारे की तरह
देर तक दहकते हैं
बुझते-बुझते भी जो
छोड़ जाते हैं
तपिश !
तमाम उम्र सुलगने के लिए।

जिंदगी

नाम है मौत की तलाश का
कोई इसे तलाशता है
किसी को यह तलाशती है।

द्वारा—श्री एन० शर्मा
234, पतपुरी लालकुर्ती,
मेरठ कैन्ट (उ० प्र०)

किसे पुकारें हम

□ ओंकारश्री

सूजे-सूजे पाव थकानें कहां उतारें हम ?
कोलाहल के इस मेले में किसे पुकारें हम ?

पता नहीं कब भीतर टूटे
कब अपने से पीछे छूटे

घर ना अपना आंगन कोई, किसे संवारें हम ?
देहरिया के मां दे दीपक, कहां उजारें हम ?

पंथ भटों को गगन मिला क्यों ?
पथ भटकों को चमन मिला क्यों ?
घुटी सांस, मन के पिंजरों को कहां उघारें हम ?
सशाहत आहत शब्दों को, कहा उचारें हम ?

बोध आज आरोह मांगता
क्षण विराट की टोह मांगता
साथ नही अस्तित्व कौन सा क्षितिज निहारें हम ?
रहबर यहां, रहनुमा ! बोलो—किसे गुहारें हम ?

10, आदर्श कॉलोनी,
बीकानेर

गीत

□ मंगत बादल

जिन्दगी-रुई को समय धुनिए-सा धुनता है।
आदमी नादान कितना सपने बुनता है।

यहां निरर्थक गीत प्रीत के, क्योंकि सब बहरे,
वीराना है देश और ये गूंगों की बस्ती,
अस्तित्व बचाने के लिए संघर्ष जारी हैं;
खुद से फुर्सत नही किसी को कौन सुनता है।

सन्देह सिपाही खड़ा मिले हर एक चौराहे पर,
नए रास्ते खुलते हैं उत्तेजित भीड़ में,
यहां समय की धारा का कुछ ऐसा वेग है;
पल-पल, छिन-छिन यह जीवन तिल-तिलकर घुनता है।

छोटा हुआ जा रहा आदमी ऊंची मीनारें,
चुभ जाते हैं फूल-शूल सम नंगे पांवों में,
मांस जहर बन जाया करती एकाकी यादों में;
टूट-टूट कर बार-बार संघर्ष चुनता है।
आदमी नादान कितना सपने बुनता है।

हिन्दी विभाग,
शहीद भगतसिंह म० वि०
रायसिंहनगर-335051

गीत

□ बुलाकीदास 'बावरा'

ऐसा पावन प्यार तुम्हारा,
जैसे गंगा बीच किनारा;

तुम आभा हो, मैं छाया हूं,
तुमसे ही कुछ हो पाया हूं;
जन्म-जन्म की उपलब्धि तुम---
तेरी शक्ति, एक सहारा।
ऐसा पावन प्यार तुम्हारा॥

कमियों का संसार लिये हूं,
पीड़ा का आगार लिये हूं,
सम्बल की एकाकी परिधि,
तिस पर तेरी सुपमित कारा।
ऐसा पावन प्यार तुम्हारा॥

किस बंधन से बांधू तुमको।
किस साधन से साधूं तुमको,
तेरा परिणय शुभ्र ज्योत्सना,
जिसकी महिमा लखलख हारा।
ऐसा पावन प्यार तुम्हारा॥

जीवन की हमराज तुम्ही हो,
मानस की आवाज तुम्ही हो,
संभव तुमसे संवर-संवर कर,
किंचित दूर करूं अंधियारा ।
ऐसा पावन प्यार तुम्हारा ॥
जैसे गंगा बीच किनारा ॥

सूरसागर के पीछे, धोबीधोरा,
हनुमान हत्थे के पास,
बीकानेर (राज०)

अधूरा जीवन

□ डा० किरण तृपिता

सूना-सूना है जीवन तुम्हारे बिना,
क्यो न लगता कही मन तुम्हारे बिना ?
प्रेम के गीत मैंने लिखे हैं बहुत,
क्यो न होता विवेचन तुम्हारे बिना ?
देवता तो बहुत है इस ससार में,
पर न होता क्यों पूजन तुम्हारे बिना ?
फूल बगिया मे यूं तो खिले अनगिनत,
पर क्यो न आती बहार तुम्हारे बिना ?
चलना चाहा था जीवन मे अकेले मगर,
पर न आता कही कोई आनद तुम्हारे बिना ?
सोचते-सोचते पा गई सार मैं,
है अधूरा ही यह जीवन तुम्हारे बिना ?

द्वारा—डॉ० वाई० आर० शर्मा
शर्मा क्लीनिक
हनुमानगढ़ कस्बा (राज०)

गीत

☐ अपर्णा चतुर्वेदी 'प्रीता'

आज न जाने क्यूं लगता है
तुम आओगे मेरे द्वारे।
ठिठक-ठिठक कर मैं आऊंगी
बिखरेंगे सवाद तुम्हारे।

चांद उगेगा दूर क्षितिज में
तब मैं तुमसे शरमाऊंगी।
लाज बढ़ेगी नयनों की ओर
अरुण आभार से भरमाऊंगी।
ऐसे लगने लगा है मुझे
गूंज उठी शहनाई द्वारे।
ठिठक-ठिठक कर मैं आऊंगी
बिखरेंगे सवाद तुम्हारे।

फागुन-सा रंग बसा हृदय में
कुंजों में जब मैं आऊंगी
तुम कान्हा बन कर रास करोगे
मैं खड़ी हुई तब सकुचाऊंगी
ऐसा फागुन पुलक उठेगा
फूल झरेंगे अंगना प्यारे
तुम आओगे मेरे द्वारे।

C/O ACTS
विद्यानगर, औरंगाबाद-2 (महाराष्ट्र)

स्वाभिमान

□ गुलशन ग्रोवर 'निर्दोष'

मैं एक फूल था
जिसे
किसी के दामन मे खिलना था
लेकिन मैं तो
मुरझा गया
किसी बेवफा के काटों मे फंस कर।
मेरी आखो के कोरो मे
चिपके हुए
हसीन ख्वाब
बालू के महल की तरह
ढह गए।
महोब्बत की लाठी उठाकर
मैंने
आग उगलते सूरज को
हिलाना चाहा—
अंगारो से जला हुआ
मेरा स्वाभिमान
पारे की तरह
जमीन पर छितरा गया।

द्वारा—भवानी नॉवल्स स्टोर,
पोस्ट ऑफिस रोड, हनुमानगढ़ ज०-335512

आदमी नहीं देखा

□ मदन अरोड़ा

आदमियों मे ही रहता हूं मैं,
पर मैंने आज तक कोई आदमी नही देखा !
क्या तुमने, कभी देखा है ?
गर देखा हो, तो मुझे भी बताना
कुत्तों को देखा है मैंने, आदमी का रूप धर कर।
भौंके रहे है, चिल्ला रहे हैं, गर्दन पकड़-पकड़ कर ॥

आदमी ! क्या पाता है किसी आदमी को सताकर
क्यू चूस लेता है किसी को अपना ही बनाकर
कुछ भी तो नही समझ पाता हूं मैं ?
सिर्फ प्रश्नचिह्नो में उलझ जाता हूं मैं ?

जिस किसी को भी मैंने आदमी समझा
कोई कुत्ता, कोई भेड़िया, कोई गिरगिट निकला
आदमियो में ही रहता हूं मैं
पर मैंने आज तक कोई आदमी नही देखा।

पजाब नेशनल बैंक
श्री गगानगर-335001

नर-संहार हो रहा है

□ यश खन्ना नीर

धूप को निकलना भी दुश्वार हो रहा है,
हाथों से नर के नर का सहार हो रहा है—

क्यों आड़ ले धर्म की अपकर्म हो रहे हैं ?
गुरु-ग्रंथ, गीता, कुरआं निष्कर्म हो रहे हैं ?
अनुयायी ही धर्म के अनिष्ट पर तुले हैं ?
ये पूजाघर हैं या कि बारूदघर खुले हैं ?
मधुकोषों में विष का भंडार हो रहा है—

नरमुंड काट-काटकर भर डाला यज्ञकुंड,
दानव करे है तांडव, है मौन खड़ा तुंड;
मान समग्र विश्व जिसे अहिंसा-साधक,
कुछ हिंस्र मंदबुद्धि उसके तप में बाधक;
क्या यूं ही स्वप्न बापू का साकार हो रहा है ?
हाथों से नर के नर का संहार हो रहा है ?

वह सीमा पार विषधर बैठा फन को फैलाये,
अवसर मिले कब भारत का भाल झुकाये;
और हम विवाद-विषय बना सीमा, भाषा को,
विस्मरण कर रहे स्वातन्त्र्य की परिभाषा को;
संभलो कि सीता-भूमि का अपहार हो रहा है,
हाथों से नर के नर का संहार हो रहा है—

7925-ए/4, अम्बाला शहर

मैं पागल

□ सरस्वती विल्थरे

क्षण रीते मन को,
तरसाते, आकर,
सपनों के आंगन में,
गम की वादी में, नैना,
बरस गये, घन सावन से।

क्या जानू, भूल गये हैं,
मैं पागल हारी,
सपनों के सागर मे,
सुलग उठी चिन्गारी।

यादों की घाटी से,
चलकर, डूब रही,
संध्या नम में,
आशा पर बिजली गिरती,
अरमानों के घर जलते।

फिर भी पतझर अंग लगाये,
चाह बहारों की लेकर,
चौंक उठूं, मंत्र मुग्ध-सी
सुन बंसी की गुंजन मैं।

आरजू

☐ वाई० पाल प्रभाकर

खिला हुआ था गुलशन एक, वीरान हो गया
मस्त पवन ने यो ही रुख तूफानी अपना लिया,
चाह कर भी सके न बदल, हम, तन्हाइयों का यह आलम
तबस्सुम की आरजू में, गम ही गले लगा लिया।

कोई तो साथी चाहिए, जीवन के लम्बे डगर पर
सपने संजो-संजो के एक, आशियां बना लिया,
क्या मालूम था इस कद्र, खिजां से होगा सामना
अनजानी आरजू मे हमने, गम का साथ पा लिया।

अब कुछ नहीं हैं पास मेरे, सर्द आहों के सिवा,
भूलना है मुश्किल जिसे, उसने इस कद्र रुला दिया,
अंधेरी राह में है यादव बेखर गम साथ लिये
सलामत रहे वो हुसन, जिसने इस तरह भटका दिया।

W3/61, नजदीक रेलवे डिस्पेंसरी
धूरी-148024,

शिशु के हित में

□ हरगोविंद शर्मा

शिशु का यह सुस्मित वदन—
न निरखो नयन, तुम्हारा कलुषित मन—
न कर दे, इसके निश्छल उर-शिशुतरु को—
छल का महा गहन वन ॥1॥

इसके ये रक्तिम अधर—
न चूमो हहर, तुम्हारी श्वासाओं का जहर—
न फैले, इसके शिशु-मृदु-तन में बनकर—
द्वेष भाव की जलती गरल लहर ॥2॥

अजी ये इसकी कोमल बाहु—
न थामो आह, तुम्हारे कर की कुकृती डाह—
न पैठे उर में इसके, इस आश्रय से जैसे—
तम को व्यापकता की चाह ॥3॥

न परसो इसका अकलुष गात—
तजो जजबात, तुम्हारी विश्वासों की घात—
न कर दे, इसके उर को अपने जैसा—
मार-मार कर, स्मृतियों कटु फौलादी लात ॥4॥

अगर है कोई इसका जनक—
छोडकर सनक, न पडने दे वह इसी भनक—
स्वार्थ के अंकुश मे फंस, अह द्वेष के लौह-पुंज मे—
दबा हुआ नर-ढूंढ रहा है कनक ॥5॥

पी० ए० ओ० (अदर रैंक)
एम० आर० सी०, सागर-470001
(म० प्र०)

वतन के लिए

□ सत्यपाल मासूम

जियेंगे, मरेंगे वतन के लिए,
बने है हम माली चमन के लिए ।

इस नन्हें से गुलशन को उजड़ने न देंगे,
हिंसा के बादल उमडने न देंगे,
लड़ेंगे हमेशा अमन के लिए।

दुश्मन जो हमसे टकरायेगा,
मिट्टी में वो यूं मिल जायेगा,
तरसेगी लाश कफन के लिए।

भारत मां की हम संतान हैं,
अमानत इसकी ये जिस्म-जान है,
हम पैदा हुए हैं वतन के लिए ।

पुष्प की पीड़ा

□ हीरालाल रिछरिया

एक दिन कांटों ने पूछा—ऐ सुमन !
क्या किसी का दर्द भी पहिचानते हो ?
है कहीं करुणा तुम्हारे कोष मे
या अकेले मुस्कराना जानते हो ।।

फूल ने हंसकर कहा—ऐ मित्रवर !
मुस्कराता है कोई अव्यक्त मुझमें ।
श्वास में प्रश्वास में धड़कन बना
भर रहा सौरभ तथा सौन्दर्य मुझमें ।।

चराचर में व्याप्त है अव्यक्त मेरा
पी रहा है गरल फिर भी मुस्कराता।
ढो रहा हूं प्यार से उसकी धरोहर
राम जाने दे रहा है क्यों विधाता ॥

एक दिन मैं उस पुरुष के शव चढ़ा
जिस पुरुष पर रो रहा था विश्व सारा।
चाहकर भी यह अधम न रो सका
ग्लानि को ढोता रहा है मन हमारा ॥

वार्ड न० 12, परमार का बा
बालाघाट-481001 (म० प्र

आशियाना

□ ज्ञानचंद गर्ग

क्या यही है आशियाना बुलबुले आबाद का,
क्या हुआ है इसको अब यह लग रहा बरबाद-सा।
कौन-सा हवा का झोंका, यह हालत कर गया,
इस तरह उजडा हुआ है आशियाना शाद का।

रास ना दुनिया को आया उसका यहां गुनगुनाना,
डाल पर उसका फुदकना और फिर चहक जाना।
कहर फिर किसका पडा बुलबुले आबाद पर,
लुट गया वो चमन ढह गया वो आशियाना।

कौन-सी दिशा मे चल दी आज न जाने वो बुल,
ढूंढता-सा रह गया फिर भटकता-सा उसका गुल।
धुस गई जमीन भी जिस्म भी जकड़ा हुआ,
खून का पानी बना फिर दिल गया है उसमे घुन।

चोंच ऊपर को उठाये वो तो बे-मुराद-सा,
आसमां को देखकर   कर रहा   फरियाद-सा।
टूट गये पंख   भी सांस भी है उखड़ी हुई,
घुट गया है आज वो गुल जो कभी आजाद था।

4/140, आहलूवालिया स्ट्रीट
सफीदो शहर-126112 (हरियाणा)

गीत

□ अंजलि शर्मा

यूं दीप जले तेरी यादों के
मेरी दुनिया के अंधेरे
मिटने लगे।

यूं आये खुशबू-झोंके के
के सारे वीराने
महकने लगे।

तू दोस्त भी हमराज भी
सारे रिश्ते तुझपे
सिमटने लगे।

फिर आया नूर नजारो में
तुम ख्यालों मे जब
आने लगे।

तुम पास हो तो क्या हो
हम तसव्वुर में
शरमाने लगे।

49, सोंधी टोला चौक
लखनऊ-526003

गीत

□ नीलप्रभा भारद्वाज

उधर वो कौन चीखा है ? लहू किसका ये बहता है ?
खुदा के नाम पर कैसा अजब ये खेल होता है ?

वो घर किसने जलाए है ? इधर बस्ती उजाड़ी है।
उन्ही उजड़ों के नाम फिर से कत्लेआम होता है।

ये नीवें डोलती है क्यो ? खुदा क्यो गैर समझा है।
इधर हर आदमी देखो ! धर्म की आड लेता है।।

अजब है बात, ओठों पर अमन के गीत, शस्त्रो के।
जनाजा आदमी के शानो पर गांधी का उठता है।।

सभी चेहरे यहां शकुनि, दिगम्बर कोढ़ उनका है।
कोई नानक तो कोई रामजी की लाश ढोता है।।

56 H ब्लाक, श्रीगंगानगर

गीत

□ ईश्वरचंद गर्ग

बरखा की रिमझिम फुहार,
ऐसे मे तेरा मनुहार,
कैसे ना मानू प्रिये, कैसे मैं कर दू इनकार !

हाथो मे तहरीर तेरी,
आंखो मे तस्वीर तेरी
जिस्म दूर-दूर हैं लेकिन, मन है एकीकार !!

रूमाल

□ भगवती पुरोहित

कवि सम्मेलन से लौटे कवि से
पत्नी ने पूछा
नयू जी, यह मुह पर रूमाल कैसे ?
कवि बोले—
कुछ नही, यू ही;
आगे के यह दो दात तो
वैसे भी निकलवाने थे !

24, दुर्गा कॉलोनी,
हनुमानगढ़ सगम-335512

गजल

मंजिल तलबगारो, सफर क्यूं नही करते।
इन पांवों को राहें, जिधर क्यू नहीं करते।

रहबर तलाशना ही जरूरी तो नही है,
इनके बगैर आप गुजर क्यों नही करते।

तरसी हुई आंखो से फलक देख रहे हो,
कुछ अपने परों पर भी नजर क्यो नही करते।

क्यों अपने घरों मे ही छुपे कांप रहे हो,
क्या खौफ है, पत्थर का जिगर क्यो नही करते।

तुम जोश में पत्थर तो बहुत फेंक चुके हो,
समझो भी कि आखिर, ये असर क्यो नही करते।

अजीज आजाद
मुहल्ला चूनगरून
बीकानेर (राज०)

हादिसों का इन्कलाब चाहिए।
आग-सा दहका जवाब चाहिए॥

खून से सींचा है जब जमीन को।
कीमतें-खू, दस्तयाब ! चाहिए॥

इस शहर को धूप लगने दीजिए।
जर्रा-जर्रा बेनकाब चाहिए॥

अपनी दुनिया है बिखरी-बिखरी-सी।
तजकरे-ना तमाम अपने हैं॥

इनमें अपना लहू छलकता है।
बज़्में-साकी के जाम अपने है॥

अपना कोई नहीं यहां संरमंद।
हादसे ही तमाम अपने हैं॥

सुरेन्दर 'सरमद'
मकान नं० 8 F- नं० 66
न्यू प्लाट, जम्मू (तवी)-180005

दर-दर की ठोकरों से जज़बात चट्टान हुए जाते हैं,
मेहमां की शक्ल में आए जख्म, मेजबान हुए जाते है।

टुकड़ा-टुकड़ा मौत को सहने की हमें आदत है,
जर-जर है हम भी ढहते हुए मकान हुए जाते हैं।

चमकने की चाहत में, मीनार के गुम्बद बन बैठे,
अब हमें धूप से लड़ना है, फरमान हुए जाते है।

इक बुत की तरह जब बैठे तो खुदा पुकारे जाते थे,
दो लफ्ज जुबां से निकले तो, इन्सान हुए जाते है॥

बाद शिकन की हद देखो, ये हाल बना के रख छोड़ा,
हम नोची खाई लाशों के श्मशान हुए जाते है।

राजेश चड्ढा
103/एल, सैक्टर नं० 12
हनुमानगढ़ सगम-335512

कलियां-ओ-फूल मसल दिये जाते हैं,
पाप होता है घोर तेरी नगरी में।
सरे-आम हर चोर लफंगे का 'नूर',
हां, चलता है जोर तेरी नगरी में।

नूर संतोखपुरी
B-x/925 सतोखपुरा,
होशियारपुर रोड, जालंधर-144004

जब गमे-हिज्र सताये तो मुझे खत लिखना
रात को नींद न आये तो मुझे खत लिखना

बज़्म मे, दश्त में, गुलजार मे, तन्हाई मे
दिल कही चैन न पाये तो मुझे खत लिखना

फूल गुलशन के जो चुभने लगें कांटो की तरह
चांदनी आग लगाये तो मुझे खत लिखना

फीके-फीके नज़र आयें जो सुहाने मन्ज़र
कोई शै दिल को न भाये तो मुझे ख़त लिखना

जब निगाहों ही निगाहो मे हुई थी बातें,
वो घडी याद जब आये तो मुझे ख़त लिखना

दामने-होश न छूटे तो कोई बात नही
इश्क़ दीवाना बनाये तो मुझे ख़त लिखना

तुमने ठुकरा के मुझे अपना बनाया है जिसे
वो भी जब काम न आये तो मुझे ख़त लिखना

तुमको 'रहमान' कही अपने बता कर कोई
मेरे अशआर सुनाये तो मुझे ख़त लिखना

रहमा रब्बानी
संपादक निग्रेबान साप्ताहिक
कालपी-285204

ज़िन्दगी मैं और जीना चाहता हूं
एक आंसू और पीना चाहता हूं

पूछने वालो मेरी चाहत यही है
साथ काशी के मदीना चाहता हूं

बैठ कर खाना मुझे आता नहीं है
देश में अपना पसीना चाहता हूं

मत उजाड़ो झुग्गियों के शामियाने
टाट के पैबन्द सीना चाहता हूं

मैं भी हूं 'अन्दाज़' मेरा भी तो दिल है
बाएख़ुदा, मैं भी क़रीना चाहता हूं

डॉ० दिनेश अंदाज़
351, दालमण्डी
सदर, मेरठ

कांटे में चारा लगाये बैठे हैं लोग।
चेहरे मे पारा लगाये बैठे है लोग।।
जुल्म की अब तो इन्तहां हो गई।
इंसाफ का नारा लगाये बैठे है लोग।।

मगरमच्छ के लिए, दलदल की योजनायें।
आदमी का गारा लगाये बैठे है लोग।।
धर्म कपडा है, चाहे जब पहिनो-उतारो।
सांसो पर धारा लगाये बैठे है लोग।।

मर्दानगी है, मरी तितलियों के पंख नोचना।
इसी मे श्रम सारा लगाये बैठे है लोग।।
भूख बहलाने के लिए, काफी है लोरियां।
पेट पर आरा लगाये बैठे है लोग।।

आनन्द बिल्थरे
बालाघाट (म० प्र०)

तेरी याद को टालने की कोशिश कर रहा हू,
यह वहम है मेरा कि, भूलाने की कोशिश कर रहा हू ।

तुझे भुलाने की उन तमाम कोशिशो मे,
हर सुबह आई थी, हर रात टल गई।
तुम्हें न देखा होता तो उम्र गुजर जाती,
तुम्हें देख कर तुम्हें भुलाने की बात टल गई।

बहुत तलाशा मैंने तुम्हे कदम-दर-कदम,
लेकिन तुम्हारी याद मे हर तलाश टल गई।
बहुत चाहा था तुमसे जी चुराना मैंने,
फिर भी तेरे नाम के साथ "मोहन" की बात जुड गई।

नरेश मोहन
द्वारा—श्री कृष्ण कुमार मोहन,
गार्ड ए०, रेलवे स्टेशन
हनुमानगढ सगम-335512

घुमा कर अपनी ही निगाहे हजार चेहरो पर।
कर लिया हर बार मैंने ऐतबार चेहरों पर॥
बाट कर अपने फूलों को अपने हाथो से।
नोच ली मैंने काटो की फुहार चेहरों पर॥
किसी को माग का सिंदूर नोच लू, कभी।
शोभा नही देता परवरदिगार चेहरो पर॥
जो चाहते है पावन ख्याल की मंजिल।
आता है मुझे भी थोड़ा प्यार चेहरो पर॥
हो गया मेरे माली का कत्ल एक रात।
ये कैसी आई है बहार चेहरों पर॥

नवल किरन कौल
पुत्री श्री आर० एस० सदल
पो० बुडाला, नजदीक अस्पताल
जिला—जालंधर (पजाब)

कैसे कैसे हादसे यहा चंद लम्हों मे हो गए
कल भटक रहे थे जो चमन वक़्त की हवा में सो गए
तोहमते लगाते हम पे थे छुप गए समय की धूल मे
जंगलों को काटते थे जो जंगलों में आज खो गए
जाने कैसी आंधियां चली बस्तियां सभी उजड़ गईं
रत जगे कहां चले गए जाने कैसी नींद सो गए
गाव-गाव है उदासियों पनघटो पे दिलकशी नही
किसने ये जला दिए नगर खेत सुनसान हो गए
गांव से जो खबरें आई है आसुओ की बाढ लाई हैं
आम को उखेड़ कर ये कौन हर तरह बबूल बो गए
हर तरफ जो होगा कत्ल-ओ-खूं दैराहरम कौन जाएगा
कैसी-कैसी बस्तियां जली शहर वियावान हो गए

अंजना सधीर

368, लक्ष्मी नगर सोसायटी,
पुराना एरोड्राम रोड, अहमदाबाद-380012

बैठा हू आज कब से तेरी इन्तजार मे।
इक आग लग गई है दिले बेकरार मे॥

होगा दिल की हसरतों का किस्सा यू तमाम।
क्यों लुट गया है आशियां फसले बहार मे॥

माना कि हम गरीब हैं लेकिन अदीब है।
गम इस कदर बढ़े हैं दिले दागदार मे॥

कहने को लोग कहते है—है मौसमे बहार।
आयेगी क्या बहार भी उजड़े दयार मे॥

राहत कहां नसीब 'विजय' बदनसीब को।
अपना शुमार है नही—उनके शुमार मे॥

विजय भारती जंडियालव

जडियाला गुरु, अमृतसर

आप रुसवा हों कभी चाहा न था।
इसलिए लब पर कोई शिकवा न था॥

उनकी मस्त आंखें मुझे बहका गईं।
इस कदर पहले कभी बहका न था॥

कुछ तो कर देते करम इस पर हुजूर।
आप ही का था ये दिल मेरा न था॥

रंज थे गम थे, कई दुख-दर्द थे।
चार दिन की जिन्दगी मे क्या न था॥

जिन्दगी बे-चैनियों मे कट गई।
अपनी किस्मत में सकूं लिखा न था॥

अपना बनकर गैर ने दिखला दिया।
इस क़दर अपना कोई अपना न था॥

दिल्लगी गम का सबब बन जायेगी।
हमने 'तायर' ये कभी सोचा न था॥

जोगिंदर 'तायर'
मकान न० 8—क न० 666
न्यू प्लाट, जम्मू (तवी)-180005

अपनों के सामने अपना दर्द छुपाया नही गया।
आंखों में उभरा यादे-आंसू दबाया नहीं गया॥

गमे-नश्तर सहते रहे थे, हम दिल पर मगर।
जख्मो पर अपने ही हाथों से दवा लगाया नही गया॥

उनकी याद मे डूब कर जिन्दगी में क्या-क्या तूफां आए।
आया था होठो पे अफ़साना मगर सुनाया नही गया॥

दिन, महिने, साल तो उन्होंने छीन ही लिए थे।
फिर तो तेरे बगैर एक पल भी बिताया नही गया ।।

शायद बिखर ही जाती खुशबू तेरे आने से 'अंशु'।
मगर हमसे ही सोया मुकद्दर जगाया नही गया।

दिनेश कुमार अंशु
46-ए-ब्लाक, गर्ल्स स्कूल के पीछे
पो० रायसिंह नगर
जिला—श्रीगंगानगर-335051 (राज०)

इस दौर मे हम आ पहुचे है—दुश्मन से मिले यारो की तरह
हर जाना-अन्जाना चेहरा अब लगे हमे प्यारो की तरह ।।

इस दौर मे हम आ पहुचे हैं जब पास हमारे कुछ भी नहीं।
हम सबके है सब है अपने, फिरते हुए बजारो की तरह ।।

यह दौर वहा ले आयी है जहां सूरज-चाद-सितारे है।
अब धरती का कोना-कोना धड़के है औजारो की तरह ।।

इस लाल दहकते सूरज के उस पार अंधेरे का दरिया।
हम आंखें मूदे दौड़ रहे गिरने को लाचारो की तरह ।।

इस अंधी दौड मे दुनिया की हम सब कब आखें खोलेंगे?
ताकि पत्थर से सर अपना फोड़े न उठे ज्वारो की तरह ।।

लहू मे डूबे बूटो से धरती की छाती लाल हुई।
सीने मे सुलगते जख्मो को पाले है अगारो की तरह ।।

जज्बए-प्यार-मुहब्बत से यू तो लबरेज है अपना दिल।
फिर क्यों हम सब के बीच यहा नफरत है दीवारो की तरह ।।

नीतेश्वर शर्मा 'नीरज'
स्थान—देवाहा, पत्रालय—काटी
जिला—मुजफ्फरपुर-843109 (बिहार)

एक और नज़्म, लिख दो बेवफ़ाओं के नाम।
हमराज हमें कर गया बदनाम सरे आम।।

ज़िंदगी से मुलाकात इत्तिफ़ाक बन गई।
शायद ही कभी बनती ये ऐसी बात बन गई।।

हमने गज़ल लिखी है अश्कों से आज शाम।
अब तो ये आरज़ू है कोई हमदर्द तो मिले।।

तन्हाई में भी हमको लगा ले जो गले।
आगोश में ही उसके निकलेगी अपनी जान।।

क्या बताएं रंजो-ग़म कितना है मेरे दिल को।
अक्सर यूं छलक जाता है अश्कों से भरा जाम।।

अंजान साधना
15, मानसरोवर
मेरठ-250001

दिल की उलझन बला की कहर बन गयी।
आपकी बेनियाज़ी ज़हर बन गयी।।

आस के ओढ़ पै है लरजती कज़ा।
प्राण की हर कसक दर्द सर बन गयी।।

नयन निर्झर बने राह तकते रहे।
उनकी वादा-खिलाफी फिकर बन गयी।।

लाख चाहा कि उनको भुला देते हम।
याद मरहूम मौते-प्रहर बनी गयी।।

रूह भी आज बेताब बागी बनी।
उनकी उल्फत जहां की जिकर बन गयी।।

कृष्णा भटनागर
'ऋचा' प्लाट न० 11
गुडा टाकुर का हत्ता
हाईकोर्ट कालोनी, जोधपुर

जिन्दगी को लेकर मिटने लगे है लोग।
जिन्दगी को खोकर जीने लगे है लोग।।
थकते नही है वे करते हैं बुराई।
आपस की बात-बात पर लडने लगे है लोग।।
कितने बदल गए है, पहले से कही ज्यादा।
नफरत है निगाहो मे जलने लगे हैं लोग।।
अरमान गरीबो के खेल समझते हैं।
हर बात पर तानाकशी, करने लगे है लोग।।
दौलत है जिन्दगी, जिन्दगी है दौलत।
जिन्दी से धोखा खाने लगे है लोग।।
साहिल को छोड़ ढूढते लहरो मे ठिकाना।
अपने को बचाने मे मरने लगे है लोग।।

अनुराग बिल्थरे
वार्ड न० 9
बालाघाट (म० प्र०)

हौसले से सितमगर के सब सितम सहते रहे।
बेवफा निकले वो जिनको बावफा कहते रहे।।
नफरतों की नीव पर तामीर कर ली बस्तियां।
पत्थरो के सनम थे जिनको खुदा कहते रहे।।
सब के सब खामोश थे और कारवां लुटता रहा।
हम हमेशा राहजन को रहनुमा कहते रहे।।
अर्जे नियाजे इश्क का अब देखिये क्या हशर हो।
सोजिशे दिल से उसे हम मेहरबा कहते रहे।।
जिन्दगी देकर खरीदी है किसी की दोस्ती।
आशिकों की कब्र थी सब गुलसिता कहते रहे।।
उम्र भर जलते रहे है, तोहमतो की तपिश से।
कहने वाले इसको 'बांके' की अदा कहते रहे।।

बांका बहादुर अरोड़ा
13—XI/540 A
नजदीक काली माता मदिर
पठान कोट (पजाब)

गर मिल जाऊं कभी, सूखा पड़ा बन्द कताँबों मे,
तो फेंकना नही ऐ दोस्त मुझे
देखा है मैंने भी महकती शाम का मंजर,
अब हो गया हू मैं इक टूटा खण्डहर,
कभी मैं भी गुलिस्तां का इक गुल था,
कली से बना इक फूल था,
गुनगुना कर छेड़ते थे भौरे मुझे
हवा लोरी गा थपथपाती थी मुझे,
सावन की इक शाम मे—
तोड़ डाला इक युगल प्रेमी ने,
कर डाला जुदा उस कांटो भरी डाल से,
कि कही मैं बिंध न जाऊं कांटो से,
मईयत सजा ली घटा-सी काली जुल्फों में,
चल दिया जनाजा बैठकर कोट की कालर में,
दफन कर दिया फिर कताँबो की कब्र मे,
गर मिल जाऊं कभी, सूखा पड़ा बन्द कताँबो मे,
तो फेंकना नही ऐ दोस्त मुझे,

मुकुट माथुर
सी-63, शास्त्रीनगर
जोधपुर-342003

उम्र गुजरी है मेरी हसीन जिन्दगी नही गुजरी।
अश्कों के आशियानो से भी ठडी हवा नहीं गुजरी॥

गुजर गया वो सब मेरा जो देखा नही तुमने।
पर हथेली की लकीरों से तुम नही गुजरी॥

लुट गया वो सब मेरा यूं ही हंसते-हंसाते।
पर मेरी मुस्कराहटों से कभी खुशी नहीं गुजरी ॥

आंखों को अब भी उम्मीद उनके आने की है।
वो इन्तजार की मुद्दत अभी नहीं गुजरी ॥

एस० राजेन्द्र
एम-23, डब्ल्यू जेड-93
हरिनगर, घंटाघर, नई दिल्ली-64

तेरी यादों से जब दिमाग जलता है।
भरी रात मेरे घर चिराग जलता है॥

तकदीर की देन है किसको क्या मिले।
मेरा पेट तो आंसुओं पे चलता है॥

बस अब थक गया ढूंढू कहां सुकून।
यहां हर शख्स, हाथ मलता है॥

तुमने मंजिलों की दी क्या तशकील।
इस राह में कौन साथ चलता है॥

किशन मार्तण्डी
पुत्र श्री अमरनाथ बुडा, आर./आर. मटन,
पो० ऑ० मार्तण्ड-192125
जि० अनन्तनाग (कश्मीर)

तस्वीरें खड़ी हैं, मौन देवताओं की।
शक्ल धूमिल है बनी, आस्थाओं की॥

पूजा गया है, सदा उगते सूरज को।
कद्र होती नहीं, भावनाओं की॥

घुलते रहे जहर, मीठी बातों में।
बाजार गर्म हुई, थिरकने अदाओं की॥

शहर के बीच लगी आग, चिरागों से।
चिन्ता अब भी, कैसी नीति दावों की॥

रहे अरमान उनके आखिरी उसांसों तक।
बूंद रक्त काम आये गहरे घावों की॥

चमन लुटाते रहे, गैरों की भलाई में।
याद आती है उन शहीदे टाओं की॥

प्रदीप शुक्ल 'प्रदीप'
अस्पताल रोड, पलियकला,
खीरी-262902

फिर मुझे नाम से इक बार पुकारो यारो,
एक-दो पल तो मेरे साथ गुजारो यारो।

कब तलक यूं ही अंधेरों में लड़ोगे तन्हा,
एक कोने में मेरा दिल भी जला लो यारों।

दिल से भड़के हुए जज्बात है बहके हुए हम,
आग लग जाएगी दामन तो बचा लो यारों।

वस्ल-शब ढूंढ़ न ले मुझको कयामत 'गाफिल'
मुझको आंचल में जरा देर छुपा लो यारो।

उनके आने की है आखों को अभी तक उम्मीद
मेरी मैयत जरा धीरे से निकालो यारो।

भीमसेन 'गाफिल'
698, कलां सोनीपत (हरियाणा)

किसी का रौंदा हुआ है दिल मेरा,
गिरते खण्डहरो-सा हुआ है दिल मेरा।

ठोकरें खाई है इसने बेइन्तहा इस कदर,
अवैध औलाद-सा हुआ है दिल मेरा।

किसी दयार में तो मयस्सर चिराग हो,
तारीकियो से घबराया हुआ है दिल मेरा।

मेरे पावों के छालो मे तेरी गलियो की खाक,
तेरे शहर मे आके बजारा हुआ है दिल मेरा।

कब तक रहेगे पत्थरो के इस शहर मे जिंदा,
कहीं चकनाचूर न हो जाए, आईना-ए-दिल मेरा।

आकांक्षा
अग्रवाल पेडीरीन
हनुमानगढ टाउन (राज०)

सफर तन्हा रहा खामोश-सा गर्दिश में कहीं।
दूर सहरां मे कहीं, आवाज पहचानी-सी लगी।।

छोडे जा रहे हैं आज तेरा ये शहर।
जिसकी हर बात हमें बेगानी-सी लगी।।

राहे वफा में कब पशैमा नहीं थे हम।
वो तुम ही थे जिसे यह हैरानी-सी लगी।।

रूह मे उतरें तेरी पलको पे बिछें।
बात तुझको भी यह जानी-सी लगी।।

तडफे तेरे लिए तेरे वजूद पे हम।
तुझको अपनी ये नादानी-सी लगी।।

जख्मों से मेरे रिसती रही आरजू की खुशबू।
तुझको तो फकत ये मरज बेमानी-सी लगी ॥

दिल जला मेरा जिस्म भी जल गया।
राख तुझे तो पहचानी-सी लगी ॥

तोलाराम स्वामी 'जख्मी'
वार्ड न० 6
सूरतगढ़-335804

-

आज किसी की मदहोश निगाह में खो जाने की रात है।
जी-भर के पीकर, आज बेहोश हो जाने की रात है।

किसी की जुल्फ मे घिरा चेहरे का चाद मुस्कराता है,
मखमली चादनी के आगोश मे सर रख के सो जाने की रात है।

शराव की बूंदों के रूप में छलकती शबनम की बरसातों में
काजल-भरे आखो के कटोरों में दिल डुबो जाने की रात है।

किसी लाजवाब रूप की तरह सतरंगी सपनों के हीरों मे,
जीवन की हकीकतो को पल भर तो पिरो जाने की रात है।

रंग की तरह प्यार में दो जिस्मो को घुल जाना है आपस में,
रात-भर की जिन्दगी में आज तो एक हो जाने की रात है।

देख लेने दें, प्यार का कल्लोल 'उशन' से तारों को भी,
उतार के शर्मो-हया का पैरहन,मस्ती मे खो जाने की रात है।

उदयचन्द्र शर्मा उशन
मार्फत—श्रीमती विमला शर्मा
जनता शिशु मॉडल स्कूल
शाहकोट-1 (जालधर)

तमन्नाओं के पहले था, आराम ही आराम
तमन्नाओं के बाद है, आलाम ही आलाम

फूलों को पाने की बहुत तरकीब लड़ाई
पर मुझे कांटों ने किया, नाकाम ही नाकाम

कर भला होगा भला यह बात दिल में बिठाई
पर कैसा मजा मैं हुआ, बदनाम ही बदनाम

खुशी से जीने की बहुत कोशिश की
मगर गम के पीता रहा जाम ही जाम

आखिर जालिम जमाने से हार के साधु बन बैठा
अब रटता हूं दिन-रात बस राम ही राम

कुदन बोथरा 'रामश्री
द्वारा—चादमल सूरजमल बोथरा
सादुलपुर चूरू-331023 (राज०)

गम-ए-रात की तन्हाई मे गजल कहने को जी चाहता है।
आज फिर हसते-हंसते रो लेने को जी चाहता है।।

भूली यादें फिर लहरो की तरह दिल से टकराने लगी हैं।
अब तो गम के समन्दर मे डूब जाने को दिल चाहता है।।

आखिरी वक्त देने को कुछ भी तो नही गरीब दामन मे मेरे।
बस, आज तो तुम्हे जी-भर के दुआएं देने को दिल चाहता है।।

तुम्हें मुबारक हो जमाने मे खुशियो की रगे महफिल।
अब तो ये जहा छोड़ जाने को दिल चाहता है।।

कु० स्वर्णलता फरासी
पोण्ड—रानी पोखरी,
पो० ऑ०—रानी पोखरी
जि० देहरादून (यू० पी०)

मुक्तक

न तुम भले हो न मैं भला हूं,
फिर पकड़-धकड़ का क्या शोर है ?
किस-किस को पकड़ोगे मेरे दोस्त,
इस मुल्क का हर आदमी चोर है।

करणीदान बारहठ
फेफाना, तहसील—नोहर,
जि०—श्री गंगानगर (राज०)

जवानी जिन्दगी की है नसैनी आखरी हमदम
ऊंचाई पर पहुंचकर तो गिरावट आ ही जाती है।
निशा काली हो कितनी भी, निशानी है सवेरे की,
उजालो पर अंधेरी रात अक्सर छा ही जाती है।।

के० एस० राणा 'परदेशी'
बी-3211-3, यू० एस० क्लब,
शिमला-171001

घोट दिया है हर एक तमन्ना का गला।
लगा रहा हूं सीने से ज़माने का हर दाग।।
तेरी शबे फुरकत काटने के लिए अब।
जला रहा हूं जिन्दगी को मानिन्दे चिराग़।।

धर्मपाल आजिज
द्वारा—बदनसिंह
जू० हा० स्कूल, बगरैन, बदायूं (उ० प्र०)

आंसू पी लिये हमने, औरों को हसाने के लिए
साथ दे रहे है गम, जिन्दगी बिताने के लिए।
आशियां फिर से, बना लिया है "सिन्धु"
तूफानों से कह दो, फिर आएं कहर ढाने के लिए ॥

शक्ति सिंधु
नजदीक राधाकिशन मन्दिर,
तालाब टिल्लो, गली न० 7, जम्मू

बी०ए० एम०ए० भटकते फिर रहे हैं देश-भर में आज,
उधर नारी बेच रही है चौराहे पर अपनी लाज।
अंगूठा छाप नेता मन्त्री बने हुए कर रहे हैं देश मे राज,
रिश्वत, चन्दा, भेंट दिए बिना होता नही कोई काम काज
चांदी के सिक्कों से तुलने वाले नेताओं को हमे,
तोलना होगा गन्दगी-कीचड़ से आज।

ओमबाबू ओझा
72-एल ब्लाक
श्री गंगानगर (राज०)

याद फिर से आ गई, भूली हुई वो शाम क्यू।
आ गया होंठों पे फिर से है तुम्हारा नाम क्यू ॥
कब किया शिकवा किसी से मैने, दिल के दर्द का।
सुन के ये किस्सा भला, तुम हो गए हैरान क्यू ॥

शैलजा चलाना
द्वारा—गिफ्ट हाउस
हनुमानगढ़ सगम-335512

जब फूल खिले हो गुलशन मे, तो गुलशन महका करता है।
वीराने मे वो ही गुलशन क्यो खून के आसू रोता है॥
जब होती है तनहाई तो मन गहराई मे खो जाता है।
ये मत पूछो महफिल मे, क्यो वक़्त जवा-सा होता है॥

सुरेश पसाहन
चौक जटेआना
जडियालागुरु, जि०—अमृतसर

•

जीवन मे फूल ही नही, कंटक भी है।
हर्ष आह्लाद ही नही, सकट भी हैं॥
यदि किसी के अगना को भरती किलकारिया है।
रोटी के टुकडे को तरसती नही सिसकारियां भी है॥
चिराग रौशन करते यदि किसी के गेह को।
वेदना के अगारे भी जलाते है किसी की देह को॥
ये जीवन सुख-दु:ख की है डगर।
जहा खुशी गागर और गम है एक सागर॥

निशा जैन
267 आदर्श नगर,
जालन्धर शहर (पजाब)

ढूढती हैं निगाहे जिनको,
आखिर वो हुस्न-ए-यार कौन है।
जिसके दर पे उम्मीद लेकर गये,
आखिर वो मजार कौन है।
जिसके सहारे काटी है हमने इस तरफ रातें,
आखिर वो उस पार कौन है।

पुरुषोत्तम रैना
यूनाइटेड कमशियल बैंक,
पो० ऑ० मादमपुर
जि०—जालन्धर-144102 (पजाब)

आंसू पी लिये हमने, औरों को हंसाने के लिए
साथ दे रहे हैं ग़म, जिन्दगी बिताने के लिए।
आशियां फिर से, बना लिया है "सिन्धु"
तूफानों से कह दो, फिर आएं कहर ढाने के लिए।।

दक्षित सिंधु
नजदीक राधाकिशन मन्दिर,
तालाब टिल्लो, गली न० 7, जम्मू

बी०ए० एम०ए० भटकते फिर रहे हैं देश-भर में आज,
उधर नारी बेच रही है चौराहे पर अपनी लाज।
अंगूठा छाप नेता मन्त्री बने हुए कर रहे हैं देश मे राज,
रिश्वत, चन्दा, भेंट दिए बिना होता नही कोई काम काज
चांदी के सिक्को से तुलने वाले नेताओ को हमें,
तोलना होगा गन्दगी-कीचड से आज।

ओमबाबू ओझा
72-एल ब्लाक
श्री गगानगर (राज०)

याद फिर से आ गई, भूली हुई वो शाम क्यूं।
आ गया होठों पे फिर से है तुम्हारा नाम क्यूं।।
कब किया शिकवा किसी से मैंने, दिल के दर्द का।
सुन के ये किस्सा भला, तुम हो गए हैरान क्यूं।।

शैलजा चलाना
द्वारा—गिफ्ट हाउस
हनुमानगढ़ सगम-335512

जब फूल खिले हो गुलशन मे, तो गुलशन महका करता है।
वीराने मे वो ही गुलशन क्यो खून के आंसू रोता है॥
जब होती है तनहाई तो मन गहराई मे खो जाता है।
ये मत पूछो महफिल मे, क्यो वक्त जवा-सा होता है॥

सुरेश पसाहन
चौक जटेआना
जडियालागुरु, जि०—अमृतसर

•

जीवन मे फूल ही नही, कंटक भी हैं।
हर्ष आह्लाद ही नही, सकट भी हैं॥
यदि किसी के अगना को भरती किलकारिया है।
रोटी के टुकड़े को तरसती नही सिसकारियां भी हैं॥
चिराग रौशन करते यदि किसी के गेह को।
वेदना के अगारे भी जलाते है किसी की देह को॥
ये जीवन सुख-दु:ख की है डगर।
जहा खुशी गागर और गम है एक सागर॥

निशा जैन
267 आदर्श नगर,
जालन्धर शहर (पजाब)

ढूढती हैं निगाहे जिनको,
आखिर वो हुस्न-ए-यार कौन है।
जिसके दर पे उम्मीद लेकर गये,
आखिर वो मजार कौन है।
जिसके सहारे काटी है हमने इस तरफ रातें,
आखिर वो उस पार कौन है।

पुरुषोत्तम रैना
यूनाइटेट कमर्शियल बैंक,
पो० ऑ० आदमपुर
जि०—जालन्धर-144102 (पजाब)

आंसू पी लिये हमने, औरों को हंसाने के लिए
साथ दे रहे है गम, जिन्दगी बिताने के लिए।
आशियां फिर से, बना लिया है "सिन्धु"
तूफानों से कह दो, फिर आएं कहर ढाने के लिए॥

शक्ति सिंधु
नजदीक राधाकिशन मन्दिर,
तालाव टिल्लो, गली न० 7, जम्मू

बी०ए० एम०ए० भटकते फिर रहे है देश-भर में आज,
उधर नारी बेच रही है चौराहे पर अपनी लाज।
अंगूठा छाप नेता मन्त्री बने हुए कर रहे है देश मे राज,
रिश्वत, चन्दा, भेंट दिए बिना होता नही कोई काम काज
चांदी के सिक्कों से तुलने वाले नेताओ को हमे,
तोलना होगा गन्दगी-कीचड़ से आज।

ओमबाबू ओझा
72-एल ब्लाक
श्री गंगानगर (राज०)

याद फिर से आ गई, भूली हुई वो शाम क्यूं।
आ गया होठों पे फिर से है तुम्हारा नाम क्यूं॥
कब किया शिकवा किसी से मैंने, दिल के दर्द का।
सुन के ये किस्सा भला, तुम हो गए हैरान क्यूं॥

शैलजा चलाना
द्वारा—गिफ्ट हाउस
हनुमानगढ़ संगम-335512

इस दिल में शमा प्यार की रोशन है इस तरहा,
सूरज चाद तारे चमके है जिस तरहा।
तूफान लाख हो मगर बुझना नही मुमकिन
जलता रहेगा यादो का चराग़ दिये इस तरहा।

लाधूसिह भाटी
डाकघर—लखू वाली हैड
जिला—श्रीगगानगर (राज०)

लघु कथाएं



युगचरित्त

□ विक्रम सोनी

मेरे घर एक गोरसी (बोरसी) थी। जिसकी आग कभी बुझते हुए मैंने नहीं देखी। कभी रात-बिरात आलू या शकरकन्द गड़िया देने के बाद भुनसारे खोद-खोद उन्हें निकालते मां देख लेती थी, तो चिल्ला पड़ती थी, 'खुदुर-खुदुर करके आग मत कंझा देना। गोरसी में हमेश आग होनी ही चाहिए।'

'क्यों अम्मा ?'

'गोरसी में आग होगी, तो तेरे भीतर भी आग रहेगी।'

तब मैं सोचता था—मेरे भीतर आग रहेगी कहां ? मैं जल जाऊंगा। लेकिन आज जब मेरे भीतर आग धधक रही है, तो मेरे आसपास ठंडे लोगों का जमघट-सा है। मैं सोचता हूं क्या इनके घरों मे गोरसी नहीं थी या इनकी कोई मां नहीं थी।

आई-169, रविशंकर शुक्ल नगर,
इन्दौर-452008

सहेली

□ पुष्पलता कश्यप

प्रात:कालीन कार्यों से निवृत्त होकर निश्चिन्तता से मैं तिपाई पर पैर पसारे ऊंघ-सी रही हूं। पैरों के पास कॉफी का प्याला रखा है। तभी मिस नीता आ पहुंची।

उसका सुबह-सुबह आना मुझे अखरता है। उसकी आंखों में आज भी एक अजीब चमक है। चेहरे पर शैतानी झलक रही है। उसे जरूर अपनी कोई नई कारगुजारी मुझसे कहनी है। उसकी मुखाकृति की भंगिमा के औत्सुक्य भाव से मैंने यह बात जान ली है। मैं चुप हूं।

मेरी मनःस्थिति के प्रति कोई चिन्ता मिस नीता को नहीं है। वह चहक उठती है—"सुनो, तो ! कल शाम मैंने उसको फिर भोंदू बना दिया···" उसकी सुरीली हंसी की झंकार ने कमरे की नीरवता को तोड़ दिया।

आगे वह और क्या कहेगी मुझे मालूम है। मैं उसकी हॉबी से परिचित हूं। वह किसी दिलफेंक युवक की अवशता की कहानी कह रही है।

अपनी इस दिलचस्प घटना को वह बड़ी तन्मयता से सुना रही है। मैं तटस्थ होकर सुनने का अभिनय करती हूं। कभी हां-हूं करती हूं। परन्तु मेरा मस्तिष्क कुछ और ही सोच रहा है।

सम्पर्क : हनुमान मन्दिर,
कचहरी पोस्ट आफिस के पास, जोधपुर-342006

प्यास

☐ शराफत अली खान

घमण्ड में चूर बादल लहराता हुआ शुष्क भूमि के ऊपर रुका और उसे दर्पपूर्ण मुस्कराहट से देखने लगा।

धरती ने बादल की ओर हसरत से देखा और याचना-भरे शब्दों में बोली, "मैं काफी समय से प्यासी हूं और आपकी प्रतीक्षारत थी, आप मुझ पर कृपा कीजिएगा ताकि मेरा आंचल हरा-भरा हो जाए।"

बादल घमण्ड से मुस्कराया। फिर उसने हवा को इशारा किया। हवा उसे ले उड़ी और बादल ने आगे बढ़कर बिजली के साथ तीव्र अट्टहास किया। फिर डोलता हुआ आगे बढ़ गया।

कुछ दूर चलने के बाद वह एक नदी के ऊपर ठहर गया, और नदी को प्रभावित करने की दृष्टि से देखने लगा। नदी ने उसका आशय समझ लिया। वह बादल से बोली, "निर्दयी, मुझे तुम्हारी याचना नहीं करनी। मैं अपने में सन्तुष्ट हूं और दूसरों की प्यास बुझाकर निःस्वार्थ सेवा करती हूं। तुम्हारी तरह घमण्डी और

स्वार्थी नही। तुम्हें जहां बरसना चाहिए था वहां तो बरसे नही, यहां तुम्हारी किसे जरूरत है ?

नदी के निष्कपट सत्यतापूर्ण शब्दों को सुनकर बादल का शरीर एकाएक गरमा गया और वह पानी-पानी हो गया।

फूड ग्रेन मिल्स,
पो० वगरैन-202525, बदायूं (उ० प्र०)

धंधा

☐ सी० दास बंसल

कुछ तथाकथित राजनीतिक लोगों ने इसे अपना धंधा बना रखा था। पुलिस तथा अन्य कुछ विभागों के एजेण्टों के रूप में काम करने वाले ये लोग लूटने और लुटने वालों के बीच मध्यस्थ की भूमिका निभाते। छोटे-मोटे झगड़ों में कुछ लोगों को उत्तेजित कर आपस मे भिड़वा देना उनका बाएं हाथ का खेल था। मामला पुलिस के दरवाजे तक घिसटता तो पुलिस से मिलकर वही लोग फंसे हुए उन लोगों को जी भरकर लूटते।

लूट के इस क्रम में उस वक्त बाधा पड़ी जब एक ईमानदार कर्मठ एवं न्याय-प्रिय पुलिस अधिकारी की उस कस्बे में नियुक्ति कर दी गई।

भोली, अनपढ तथा नासमझ जनता को लूटने वाले उस कस्बे के वे कथित चौधरी इस नियुक्ति से निरुत्साहित हो उठे। उक्त अधिकारी ने आम आदमी से सीधा सम्पर्क कायम कर लिया। उन लोगों का सम्पर्क माध्यम टूटने लगा और उनका धंधा ठप्प होता चला गया। वे बेसहारा और यतीम होने लगे—परन्तु वे निराश नहीं थे। उन्होंने एक पुरानी चाल चली—

राजनीति से थोड़ा संबंधित होने के कारण जिले मे उनका अच्छा प्रभाव था। वे पुलिस कप्तान से मिले और उन्होंने उक्त अधिकारी की ईमानदारी, कर्मठता, एवं न्यायप्रियता की जी-भरकर प्रशंसा की। कुछ दिनों उपरान्त एक छोटे से जन-समूह को सम्बोधित करते हुए उन लोगो ने उक्त अधिकारी की हाजिरी में ही उसकी प्रशंसा के पुल बांध दिए। चापलूसी का यह क्रम छोटी जनसभाओ से बड़े समारोहों तक खिसकता चला गया और उन लोगों के प्रति उक्त अधिकारी का रवैया नरम से नरमतर बनता चला गया।

वक्त के साथ-साथ एक ऐसा बिन्दु भी आ पहुंचा जब प्रशंसा का यह मीठा जहर उक्त अधिकारी के भीतर तक घर कर गया और उन लोगों के मुह से जनसभाओं में अपनी प्रशंसा सुनने का यह नस्खा उसकी कमजोरी बन गया। पुलिस का यह ईमानदार एवं न्यायप्रिय अधिकारी उन लोगों के निकट होने लगा और आम आदमी से उसका सम्पर्क माध्यम टूटने लगा।

मध्यस्थता करने वाले वे लोग अवसर पाकर एकाएक सक्रिय हो उठे और इसके साथ ही उन लोगों का आम आदमी की लूट का पुराना धंधा फिर से चल निकला।

स्टेट बैंक आफ पटियाला
धूरी-148024

भूख

☐ रविदत्त मोहता

पेट भूखी डकारें ले रहा था। अंतड़ियां टूट-टूटकर बुरादा हो रही थी। उसे महसूस हुआ जैसे कि उसके पेट में एक भूखा मुर्गा बैठा हो। उसने अपनी चाल तेज कर दी।

सामने मंदिर था। हनुमान जी का मंदिर। उसकी आसक्ति फूट पड़ी। कांपते हाथ जुड़कर लिफाफा बन गये। उसने पैर की धूल झाड़ी। मंदिर की अन्तिम सीढ़ी पर माथा टेका। और सीढ़ियां चढ़ने लगा।

सीढ़ियां बहुत थी। इतनी कि जैसी उसने अपनी डिग्री पर बनते महसूस की थी।

चढ़ ही गया। वह हांफ रहा था। टनऽऽऽ और एक भूखी डकार एक साथ मंदिर में गूंज उठी। मंदिर पर बैठा एक कौवा हिलती घंटी को देखकर न जाने क्यूं उड़कर आया और उसे चोंच मारकर उड़ता चला गया।...

अब वह मंदिर के चारों ओर चक्कर लगा रहा था। तीन-चार चक्कर लगाते ही उसे चक्कर आने लगे। फिर भी वह मंदिर की दीवारों को थामता चक्कर लगाने लगा। कि छठे चक्कर में उसे गश आ गया। वह गिर पड़ा। बेहोश हो गया।

भीड़ एकत्रित हो गई थी। किसी ने उसे दो-तीन बार हिलाया। फिर उठाया

और मन्दिर के बाहर पेड़ के नीचे लिटा दिया। लोग उस आदमी की प्रशंसा करने लगे।

मैंने देखा और सोचा—"दोनों हाथ कमर पर रखकर उस भूखे इंसान को उठाकर पेड़ के नीचे क्यूं लिटाया ? अगर इतना ही बल था तो भूखे पेट पर अपने स्वस्थ हाथ रखते ? भूखे आदमी को पेट के बल उठाते ?"

भीड़ छट गई। मैंने देखा...उस भूखे इन्सान के भूखे पेट पर पीपल के पेड़ के बड़े-बड़े कुछ ताश-से पत्ते बिखर गये थे। ऐसा लगा मानो भीड़ अभी-अभी उसके पेट पर जुआ खेलकर गई हो !

पी० डब्ल्यू० डी० कालोनी
क्वार्टर न० एफ-18
हनुमानगढ़ ज०

प्रतिघात

☐ नन्दलाल पुरोहित

"...ब...बाबूजी ! मुझे गाव जाना है। मेरे पास किराये के पैसे नही हैं।" भिखारी से दिखने वाले लड़के ने राह चलते एक सज्जन को रोककर कहा।

"तो ?" सज्जन बोले।

"मेरे गांव का किराया पन्द्रह रुपये है। दस मेरे पास हैं—पाच आप दे दीजिए बड़ी मेहरबानी होगी" बच्चे ने याचना करते हुए कहा।

"चल हट, साले ! तेरे जैसे ठग हजारो मिलते हैं मुझे दिन मे, जो पैसे ऐंठकर ले जाते है।" लडके को ठोकर मारकर वे सज्जन आगे बढ गए।

"...बूट...पालिस ! बूट पालिस !! पचास पैसे, पचास पैसे !!!"

फुटपाथ पर बैठा दस-पन्द्रह साल का एक बच्चा ऊंचे स्वर में बोल रहा था। वही सज्जन उस लडके के पास से गुजर रहे थे कि उनकी नजर उस पालिश वाले पर पड़ी। उनके पैर रुक गये। मुड़कर वे बच्चे के पास जाकर उसे घूरने लगे।

"...क...क...क्या देख रहे हैं बाबूजी !" बच्चे ने आश्चर्य मे कहा।

"अ...हूं.. ह...हां। त...त...त...तुम.. स...स...सन्जू हो। हां, तुम मन्जू हो। मेरे बेटे। देख...देख, वही...व...मही...त...त...तेरे माथे पर...

बड़ा···भा। म···म···मझला था···आओ मेरे बच्चे। मेरे पास आओ !! अब तुम बूट पालिश नहीं करोगे। तुम भी बाबूजी बनोगे। तुम मेरे खोये हुए बेटे हो। चलो घर चलें।" सज्जन खुशी से पागल हुए जा रहे थे क्योंकि, आज उन्हें वर्षों पहले का खोया हुआ उनका बेटा मिल गया था। उनकी खुशी का कोई ठिकाना न था।

"चल हट, सेठ के बच्चे ! तेरे जैसे हजारों मिलते हैं मुझे दिन में, जो बच्चों को फुसलाकर ले जाते हैं—जाइये यहां से।" बच्चा दो-टूक उत्तर दे अपनी पालिश की पेटी उठाकर एक तरफ दौड़ पड़ा, मानो शेर के पंजे से छूटकर भागा हो। वे सज्जन उसे दूर तक जाते हुए देखते रहे।

24-दुर्गा कालोनी,
हनुमानगढ़ संगम-335512 (राजस्थान)

सर्विस बुक

☐ आनन्द बिल्थरे

दीनानाथ दफ्तरी चार साल से अपनी पेंशन के लिए दफ्तर-दर-दफ्तर भटक रहा था। छोटे बाबू से लेकर बड़े साहब तक उसने कई बार फरियाद की, अपनी बीमार पत्नी और जवान बेटी का हवाला दिया लेकिन हर बार उसे यही जवाब मिला कि उसकी सर्विस बुक नहीं मिल रही है। तीस साल तक नौकरी करने के बाद सर्विस बुक का खो जाना एक ऐसा हादसा था, जिसने उसे तोड़कर रख दिया था। हर स्तर पर उसे आश्वासन मिलता, नई सर्विस बुक बनाने की बात कही जाती, लेकिन मामला कर्ण के रथ की तरह तिल भर भी आगे नहीं बढ़ता।

पन्द्रह दिन पहले भूख और बेजारी से तंग आकर उसकी बेटी कहीं भाग गई थी। इसी सदमे में उसकी पत्नी ने भी दम तोड़ दिया। एक दिन विक्षिप्त की तरह अनायास ही उसके कदम फिर दफ्तर की ओर बढ़ गये। दफ्तर के दोनों ओर छोटी-मोटी होटलों की कतारें और पान के ठेले लगे थे। वह निढाल-सा जाकर रामधन के होटल में बैठ गया। नौकर ने आदतन पानी का गिलास उसके सामने रखा। उसने एक ही सांस में गिलास खाली कर दिया।

उसकी आंखें भूख से छटपटा रही थीं। उसने जेब में हाथ डाला। एक चवन्नी से उसकी अंगुलियां टकराईं। उसने चार आने के मंगोड़े लिये। उसने एक मंगोड़ा

मुह मे डाला ही था उसकी नजर मंगोड़े वाले कागज पर पड़ी। एक जगह उसे अपना नाम और सही दिखाई दी। उसने ध्यान से देखा, वह उसकी सर्विस बुक का पन्ना था, जिसके लिए वह बरसों से भटक रहा था।

उसकी आंखों से अनायास ही आंसू बहने लगे। उसने मंगौडा सहित उस पन्ने को अपने माथे पर दे मारा और वही संज्ञाशून्य होकर गिर पड़ा।

बालाघाट (म० प्र०)

पुनरावृत्ति

☐ के० कौशल्या

"बेटे, तुम्हारे स्कूल से यह शिकायत आई है कि तुमने अपने 'टीचर' से मार-पीट की? उनसे गाली-गलौच किया? क्या यह सच है?" पिता ने अपने पुत्र से पूछा। पुत्र ने झिझकते हुए प्रत्युत्तर दिया—"जी हां पिताजी।" और अपना सिर झुका लिया। पिता ने पुत्र को समझाते हुए कहा—"बेटे, यह अच्छी बात नही है। पुरातनकाल मे विद्यार्थी अपने गुरु की सेवा किया करते थे। हजारों कष्ट सहकर भी गुरु की आस्था में सदैव उत्तीर्ण हुआ करते थे। गुरु विद्या पाकर यश, ज्ञान और महानता के शिखर पर चढ़ जाते थे। यह तुम आजकल के विद्यार्थियों को क्या हो गया है। ज्ञान प्राप्त करने की बजाए अपने गुरुओं का निरादर करना ही अपना लक्ष्य समझते हो। जाओ अपने टीचर से क्षमा मांगो?"

पुत्र ने झिझकते हुए प्रश्न किया—"पिता जी, हमारी दादी जी प्रायः कहा करती थी कि आप पाठशाला मे अपने मास्टरों को अक्सर तग करते थे। क्या आपने क्षमा मागी थी?"

पिता ने उसी सहज भाव से उत्तर दिया - "बेटे, मैं आगे का गिरा, पीछे का होशियार हूं। बुरे कर्म की पुनरावृत्ति नहीं होने दूगा।"

बेटा निरुत्तर सिर झुकाए खड़ा रहा।

मकान न० 10-5-821
नन्दनार नगर, लालगुडा
सिकन्दराबाद (आ० प्र०)

कटी हुई नाक

□ लीला शर्मा

वह भिखारिन काफी समय से उस गोरी चमड़ी वाले विदेशी पर्यटक के पीछे पड़ी हुई थी। कभी हिन्दी में पांच रुपये तो कभी अंग्रेजी में 'फाइव रुपीज' कह रही थी। वह पर्यटक एक पैसा भी देने के मूड में नहीं था। उसने कई बार भिखारिन को दुत्कारा, मगर वह टली नहीं।

अचानक वर्माजी वहां प्रकट हो गये। पर्यटक ने वर्माजी से कहा, 'देखिए, यह भिखारिन काफी समय से मेरे पीछे पड़ी हुई है। मैं जानता हूं कि पांच-पांच पैसे मांगने वालों में है। मुझे विदेशी पैसे वाला मानकर ठगने पर उतारू है। मुझसे पांच रुपये मांग रही है। कृपया इससे मेरा पीछा छुड़वाइए।"

वर्माजी ने उस भिखारिन को डांटा, "शर्म नहीं आती तुम्हें देश की नाक कटवाते हुए? यह विदेशी सोचेगा कि भारत में बस भिखारी और ठग ही बसते हैं। *भाग जाओ यहां से, वरना पुलिस को बुला लूंगा।"*

वर्माजी के डांटने से भिखारिन मायूस होकर चली गई। पर्यटक और वर्माजी चाय की एक दुकान पर बैठ गए। बातें चलने पर वर्माजी समझ गए कि पर्यटक की रुचि पुरातत्व के महत्व की वस्तुएं खरीदने में है। वह बोले, "अगर आप लेना चाहें तो मेरे पास एक पुरानी चीज है। बीरबल के पास एक बहुत अच्छी गाय होती थी। रोजाना उसका दूध एक लोटे में अकबर के यहां जाया करता था। अकबर उस दूध को पीते थे। वह लोटा मेरे पास है। पन्द्रह सौ में दे सकता हूं।"

पर्यटक उसे खरीदने के लिए तैयार हो गया। वर्माजी ने एक पुराना लोटा पन्द्रह सौ में उन्हें बेच दिया। पर्यटक खुश होता हुआ चला गया। वर्माजी भी खुश थे कि पन्द्रह का लोटा पन्द्रह सौ में बिक गया।

अगले दिन सुबह वर्माजी के बूढ़े पिताजी ने पूछा, 'बेटा, आज वह लोटा दिखाई नहीं दे रहा, जिसमें पानी लेकर मैं निवृत्ति के लिए खेतों की तरफ जाता हूं। तुमने उसे कहीं देखा तो नहीं? या छोटी बहू ने फूट में तो नहीं बेच दिया?"

वर्माजी बोले नहीं। कैसे बोलें? उनकी जेब में देश की कटी हुई नाक पड़ी थी।

दामोदरदास विद्यापीठ,
[illegible] (राज०)

चेताने वाले

☐ निशान्त

वे एक सरकारी स्कूल में अध्यापक थे। उनके पास एक गरीब और भोला व्यक्ति अपने लड़के को दाखिल करवाने आया। अध्यापकों ने उससे दाखिले के बहाने पांच रुपये ले लिये। उसके साथ एक छोटा बच्चा भी था। जाते वक्त उसने अध्यापकों को बताया कि इसको अस्पताल में ले जाकर पोलियो का टीका लगाऊंगा।

अध्यापकों ने उसे चेतावनी दी कि देखना कहीं वे तुमसे पैसे न ले लें। वहां टीका मुफ्त में लगाया जाता है।

द्वारा—बसन्तलाल हेमराज
पीलीबंगा-335803
जिला—श्रीगंगानगर (राज०)

गर्म शॉल

☐ चांद शर्मा

बूढ़े बाप ने अपने कमाऊ बेटे से कहा—"बेटा, बहुत कमजोर हो गया हूं। बूढ़ी हड्डियों से अब सर्दी बर्दाश्त नहीं होती। मुझे एक गर्म शॉल ले दो। सर्दी का मौसम……"

बेटे ने बाप की बात काटते हुए कहा—"आप तो जानते ही हैं कि मैं कुछ भी नहीं बचा पाता। सीमित-सा वेतन और उस पर सौ खर्चे। मुश्किल से घर का खर्च ही चलता है…।"

बाप ने सोचा कि बेटा ठीक ही कहता है। उसने कहा—'कोई 'बात नहीं बेटा…मैं किसी तरह गुजारा कर लूंगा।"

रात को बेटा देर से घर लौटा। बढ़िया विलायती शराब के नशे में झूमता हुआ अपनी बीवी के कमरे में चला गया।

उसका बूढ़ा बाप एक झोपड़ीनुमा कमरे में उकड़ू-सा बैठा खांस रहा था और

फटी हुई रजाई में सर्दी से बचने का निरर्थक प्रयास कर रहा था।

"आज तो मजा आ गया, डालिंग। क्लब में बैठे-बैठे ही मूड बन गया··· फिर···"

"आज फिर जुआ खेलकर आ रहे हैं न?" बीवी ने क्रोधित स्वर में कहा। कितनी बार मना किया है कि यह जुआ बर्बादी की निशानी है। कोई शौक ही पालना था तो···"

"तुम न सुनती हो, न समझती हो ..बस लेक्चर झाड़ने लग जाती हो···।" पति ने उसकी बात काटते हुए कहा, "पूरे पांच सौ रुपये जीते हैं···।"

"सच ?" बीवी खिल-सी गई। "कहां हैं रुपये ! लाओ मुझे दो···मैंने एक काश्मीरी शॉल लेना है ··सामने वाली राधा ने भी लिया है···आजकल बड़ा रिवाज है।"

"ले लेना···पर शॉल तो पहले ही तुम्हारे पास···।" "पति की बात काटते हुए बीवी बोली····"देखो जी मेरी चीजें गिना मत करो···अपने-अपने शौक हैं।' बीवी की आंखों के आगे नया काश्मीरी शॉल घूमने लगा और वह खुशी से अपने पति के सीने से चिपट गई।

उधर बूढ़ा बाप बुरी तरह खांस रहा था और सर्दी से ठिठुर रहा था।

कूचा दीनमुहम्मद,
बटाला-143505 (पंजाब)

अन्तिम संस्कार

☐ अंकुश्री

मानसिक आरोग्यशाला के कर्मचारियों की हड़ताल चल रही थी। हड़ताल से फैली कुव्यवस्था के कारण एक ही रात मे दस रोगियो की मृत्यु हो गई। हड़ताल के कारण आरोग्यशाला के रोगियो के जहां खाने तक की व्यवस्था नही थी वहां मृत रोगियो के दफनाने की व्यवस्था कौन करे ? रोगियो की लाशें पड़ी रही।

एक ही रात में दस रोगियो की मृत्यु हो जाना चर्चा का विषय बन गया था। पास-पड़ौस की बस्ती वालों को कैसे न कैसे इस बात की जानकारी मिल गई कि मृतको मे तीन मुसलमान भी शामिल है। बस्ती वाले मुसलमान थे। वे मुसलमान मृतकों को दफनाने के लिए उनकी लाशें अस्पताल से उठा ले गये।

बचे हुए सात मृतको मे से दो के गले मे होली-क्रास लटक रहा था। बात कानों-कान फैल गई और चर्च वालो तक पहुंच गई। चर्च से कुछ लोग आकर उन

दोनों की लाशें दफनाने के लिए ले गये।

बाकी बचे हुए पांच मृतकों को पहचानने वाला कोई नही था। पहले वे पागल कहे जाते थे बाद में मृतक हो गए थे।

हड़ताल के कारण मानसिक आरोग्यशाला का मेनगेट खुला पड़ा था। मैदान के एक कोने में मृत रोगियों की लाशें पडी हुई थी। उनकी लाशों पर मक्खियां भिनभिना रही थीं। बाद में कीड़े लगने लगे। तीसरे दिन चील-कौवे भी आ गये। बिना कोई पहचान खोजे वे प्राणी मृतकों के अन्तिम संस्कार में जुट गए थे।

वन भवन (ल० व० प०)
हिनू, रांची-834-002 (बिहार)

धन्धा

☐अशोक लव

युवक ने युवती को देखा। परखा। गोरी-चिट्टी, ऊंची-लम्बी थी। हंसती तो फूल झरते। मुस्कराती तो चांद शरमा जाता।

युवक ने झट 'हां' कह दी।

"पर दहेज में आप क्या-क्या चाहेंगे?"—युवती के पिता ने पूछा।

"अजी साहब दहेज कैसा! हम तो नए विचारों के है।"—युवक के पिता ने कहा।

युवती के पिता की सास मे सांस आई।

विवाह बिना दहेज घूमधाम से सम्पन्न हो गया।

रात हुई। दुल्हन पलंग पर बैठी पति की प्रतीक्षा करने लगी। पति आया। साथ मे एक अपरिचित व्यक्ति भी था। पति बाहर चला गया। उस व्यक्ति ने दरवाजा झट से बन्द कर लिया।

"मैंने इस रात का सौदा पांच हजार मे किया है—" कहकर उसने नई-नवेली दुल्हन को बांहों मे भर लिया।

दिन चढा।

दुल्हन को पता चला उसकी प्रत्येक रात का सौदा तय हो चुका था।

फ्लैट संख्या-13
दि एयर फोर्स स्कूल परिसर,
सुब्रोता पार्क, दिल्ली छावनी-110010

दो नम्बर की कमाई

□ सरोज पुरोहित

उसने सुनार की दुकान से कुछ स्वर्णाभूषण पसन्द कर दुकानदार से कहा —
"लो, ये आभूषण पैक कर दो तथा मेरे पापा के नाम से बिल बना दो।"

"यह लो बेटी, पांच हजार तीन सौ बीस रुपये बने हैं सारे।" दुकानदार ने पैकेट थमाते हुए कहा।

"मुझे बिल दीजिए!"

"बेटी तुम बिल का क्या करोगी। ऐसे ही ठीक है।"

"चुपचाप बिल दे दीजिए क्योंकि आप नहीं जानते कि मैं यहां के सी० टी० ओ० की लड़की हूं। एक मिनट में तुम्हारी दुकान सील करवा दूंगी सारा दो नम्बर का धंधा धरा रह जाएगा।"

"देख बेटी, एक तो तुम्हारे पापा सरकारी कर्मचारी हैं तथा लाभ के पद पर कार्यरत हैं इसलिए एक साथ पांच हजार के आभूषण नहीं खरीद सकते। बेवजह एन्टीकरप्शन वालों के चक्कर में फंस जाएंगे। दूसरा इस दो नम्बर की कमाई में से तुम्हारे पापा भी हम से हीं...ही...ही...ही..."

24-दुर्गा कालोनी,
हनुमानगढ़ संगम-335513 (राज०)

कीमत एक मां की

□ अनिल शोरा

एक औरत अपने बालक को उठाये, जो भूख से बिलख रहा था, ले जा रही थी। मां ने अपने बच्चे की भूख को कम करने के लिए उसका मुंह अपनी छाती से लगा लिया। बच्चा एक क्षण के लिए चुप हुआ परन्तु दूध की एक बूंद न पाकर वह फिर भूख से बिलखने लगा।

तभी उनके करीब एक आदमी आया। उसने उस औरत के कान में कुछ कहा, पहले तो उसके चेहरे पर क्रोध व कुछ भय के चिन्ह आये, लेकिन फिर एकदम शान्त चेहरा, जैसे उसने कोई बहुत बड़ी चुनौती स्वीकार कर ली हो।

वह अपने बच्चे को वहीं छोड़ उस आदमी के साथ चली गई। एक घण्टे

बाद जब वह आई, तब वह थकी-सी थी। हाथ में रोटी व सामान था, लेकिन तब तक उसका बच्चा गहरी निद्रा में सो चुका था। बच्चे की लाश पुकार-पुकार कर भारत की माताओं से कह रही थी, कि—'एक मां को अपनी ममता की भूख मिटाने के लिए कब तक अपनी आबरू को गूंथ कर रोटी खिलानी पड़ेगी, कब तक, आखिर कब तक…?'

6/5 भगवानदास क्वार्टर
देहरादून (उ० प्र०)

अपने लिए

☐ एस० मोहन

झबरू के बच्चे को कुत्ते ने काट खाया तो वह दौड़ा हुआ कम्पनी के अस्पताल पहुंचा। डाक्टर सिंह कोठी मे आराम फरमा रहे थे। बिना घाव की जांच-पड़ताल किये-डाक्टर साहब ने उसे दवाई भेज दी। झबरू दिल मसोस कर रह गया।

अगले रोज जब झबरू बच्चे को लेकर अस्पताल पहुंचा तो उसे पता चला डाक्टर साहब अपने बच्चे को लेकर बड़े अस्पताल गए है। उनके छोटे बच्चे को रात घर के पालतू कुत्ते ने काट लिया था। उनके पास कुत्ते की काटने की दवा की व्यवस्था जो नही थी।

झबरू की आंखें अपने बच्चे की टांग से रिसते खून को देख डबडबाने लगी थी।

स्वास्थ्य एव खाद्य निरीक्षक
उत्तर रेलवे हैल्थ यूनिट
हिसार (हरियाणा)

अंधा

☐ नरेश थरेजा

पुराने फटे हुए वस्त्र पहने वह तरुण लड़की अपने अंधे बाप का हाथ अपने कंधे पर लिये उस दुकान के आगे रुकी! सेठ ने फटे वस्त्रो से बाहर उफनता गजब का

योवन देखकर चार नम्बर के चश्मे को चार बार पोंछा। मुंह से गिरते पानी को संभाला और जेब से दस का नोट निकाला। अंधे बाप ने लड़की से कहा—"चल बेटी, मुझे यह आदमी भला नहीं दिखाई देता !" मैं ठिठका। वह अंधे होते हुए भी देख पाया — उस सेठ की गिद्ध-सी भूखी नजर। और सेठ आंखें होते हुए भी न देख पाया—उस दीन लड़की के चेहरे पर भूख की व्याकुलता, उसकी करुण स्थिति।

क० लेखाकार
सि० क्षेत्रीय विकास
इन्दिरा गांधी नहर परियोजना
हनुमानगढ़ जं० (राज०)

'नाटक'

☐ दीपा बंसल

आज निशा को नींद नहीं आ रही थी। उसके मस्तिष्क में एक ही नाम गूंज रहा था विकास ! विकास ! वह समझ नहीं पा रही थी क्या व्यक्ति के जीवन-मूल्य इतनी जल्दी भी बदल जाते हैं। वे सिद्धान्त ही क्या जो टूट जाएं, वे आदर्श ही क्या जो रेत के महल की तरह ढह जाएं। नहीं, नहीं, विकास ऐसा नहीं कर सकता। अपने आदर्शों के मजार पर, सुखों का महल नहीं सजा सकता। लेकिन यथार्थ से भी तो मुंह नहीं मोड़ा जा सकता। कानों सुनी बात से तो मुंह मोड़ भी लेती लेकिन आंखों देखे सच को कैसे नकारे। विवाह का निमन्त्रण-पत्र तो झूठ नहीं हो सकता।

निमन्त्रण-पत्र पढ़कर चौंक गई थी निशा। विकास, जिसने अन्तर्जातीय विवाह करके समाज के सम्मुख आदर्श पेश करने की शपथ खाई थी, अपनी ही जाति में विवाह कर रहा था। निशा के मन में आया कि अभी चिल्ला-चिल्लाकर पूछे विकास से—कहां गया तुम्हारा समाज की रूढ़ियों को तोड़ने का संकल्प। तुम तो हमेशा दहेज-प्रथा के विरोधी रहे हो। जी-भरकर कोसा है तुमने इस प्रथा को। लेकिन अब तुम बाकायदा दहेज लोगे। पूरे दो सौ आदमियों की बारात लेकर जाओगे। कहां रहा तुम्हारे विवाह का आधार—'वैचारिक समानता' विकास जी, किसी भी आदर्श पर चलना तलवार की धार पर चलने के समान है। उसके लिए त्याग करना पड़ता है निजी स्वार्थों को तिलांजलि देनी पड़ती है सुखों को, समाज के व्यंग्य-बाण झेलने पड़ते हैं।

अचानक निशा को लगता है जैसे विकास उसके सम्मुख खड़ा है और शान्त मन से कह रहा है—निशा, तुम तो एकदम पागल हो। वह सब तो एकदम नाटक था। आदर्शवादी बनकर लोगों पर धाक जमाने का। आदर्शों को जीवन मे अपनाया नही जाता। नाटक मे मेरा अभिनय पूर्णतया सफल रहा।

नही, ये सब झूठ है। निशा एकदम चिल्लाई। उसके सम्मुख न विकास था, न ही उसकी आवाज उसके कानों मे आ रही थी। उसके सामने एक ही प्रश्न था क्या सभी नाटक करते है ? कही भी कुछ भी सत्य नही। इन्ही प्रश्नों को सोचते-सोचते निशा को नीद आ गई।

U. E. II, हिसार-125005

अहसास

□ सुरेन्द्र तनेजा

वे सब हंसते-खेलते, मटरगश्ती करते कालेज से घर लौट रहे थे।

"उस्ताद, आज तो मजा आ गया।"

"क्या छेड़ा उस मुटल्लो को भी ?"

"अब आगे से कभी सिर उठाकर नही चलेगी।"

"स्साली ! पता नही अपने आपको क्या समझती थी।"

"हूर की परी। हा · हा···हा···।" एक सम्मिलित ठहाका गूंज उठा।

"अच्छा उस्ताद, चलते हैं अब।" एक मोड़ पर आकर अन्य दोस्तों ने विदा लेते हुए कहा।

"अच्छा, फिर मिलेंगे।" कहते हुए वह अपनी गली की ओर मुड़ गया।

उसने घर में जैसे ही प्रवेश किया, उसके कदम रुक से गए। उसकी छोटी बहन कह रही थी, "मां, पता नहीं आजकल के लड़कों को क्या हो गया है ? हम सीधे मुह घर आ रही थी कि लगे छेड़ने···फिकरे कसने। पता नहीं उन्हें इस छेड़छाड से क्या मिल जाता है ? जैसे घर मे अपनी मा-बहन तो है ही नही। बस, हम तो सिर झुकाए सीधे घर चली आयी।"

बहन का ये वाक्य उसके दिल मे तीर-सा चुभ गया। उसका अन्तर्मन अनकही पीड़ा से तड़प उठा।

उसे अहसास हुआ कि घर में उसकी भी एक छोटी बहन है, जो अब छोटी नहीं रही।

मकान न० 6, एल ब्लाक,
श्री गंगानगर-335001 (राज०)

भगवान का घर

☐ नन्द किशोर गोयल

एक मंदिर, उसी मे सटती हुई कई कच्ची कोठरियों के रूप में एक धर्मशाला। जहा नियमानुसार रात भर रुकने का यात्रियो से नाम मात्र का शुल्क लिया जाता है। मदिर व धर्मशाला की व्यवस्था के नाम पर नियुक्त एक मुछल पंडा व उसकी सहयोगी है एक चाडाल चौकडी।

पोह माह के अमावस की एक रात---"भाई साहब रात भर रुकना है।' पंडे से सम्बोधित होता हुआ एक युवा जोड़ा गिड़गिड़ा रहा था। युवक का गरीबी से सारोबार (युवत) गवारपन साफ झलक रहा था। गदराये जिस्म व सुन्दरता की अद्वितीय मूर्त साथ वाली युवती अपने रोते बच्चे को फटे आचल से सर्दी से बचाने की नाकाम कोशिश कर रही थी।

'गरीबी मे उसकी सुन्दरता', शायद ईश्वर ने उसके साथ बेइन्साफी की थी।

एक कोठरी की तरफ इशारा करते हुए पंडा ने कहा, "उसमे रजाई रखी है, घुसड़ जाओ।"

चाडाल चौकडी मे कुछ गुफ्तगू हुई। कुछ क्षण बाद पंडा कोठरी का दरवाजा थपथपा रहा था।

"यह मंदिर है तुम 'पति-पत्नी' एक कोठरी मे नही सो सकते।" युवक ने पंडा की चाल ना समझते उसका समर्थन किया। और युवती अपने बच्चे के साथ दूर किनारे वाली कोठरी मे दुबक गई।

रात्रि के अर्ध पहर पर, युवती की कोठरी मे ,पूरी-की-पूरी चाडाल चौकड़ी ~मा चुकी थी।

भगवान के घर मे ही ईश्वरीय-रूप बच्चे की गर्दन खलास कर देने की धमकी ~वती बेबस थी।

था डर के मारे भगवान भी घर छोड़ भाग छूटे थे।

रावतसर

महानगरी का दर्द

☐ हरि राजस्थानी

"हरामजादे चल निकल जा घर से। इस घर में अब तेरे लिए कोई जगह नही है। घर बैठे बेगार की रोटियां पाड़ता है।" बापू रामबचन के कठोर वचन सुनकर उसके हृदय मे आया कि कही जाकर आत्महत्या कर ले और त्याग दे उस समाज को जिसने उसे घृणा और नफरत के अलावा कुछ न दिया। लेकिन बेचारा मन मार कर रह गया था। उसका हृदय आत्मग्लानि से पीड़ित हो उठा! सोचा शहर जाकर भाग्य आजमाया जाए। महानगरी की भीड़-भाड़ मे। बेरोजगारी का दर्द। बहुत दिनों बाद एक काम हाथ लगा था वो भी अखबार बांटने का। सुबह-शाम चौराहों पर या बस-स्टैंडों पर अथवा महानगरी के किसी कोने मे अखबार बांटकर अपनी आजीविका चलाता।

अखबार बेचने वाला भिन्न आवाजें लगा रहा था-- ले लो 'सांध्य टाइम्स, इवनिंग न्यूज, वीर अर्जुन, वन्देमातरम्' आदि। एकाध तिपाहिया चालक या कार बाबू आता। बाकी अखबार बस में चढ़कर या इधर-उधर घूम-फिरकर बेच देता। उस दिन एक बस मे उतरकर दूसरी बस में जाने की तैयारी में विभिन्न आवाजें लगा रहा था—"आज चरणसिंह का पत्ता साफ। राजीव गांधी देश के नये प्रधान-मन्त्री। आई-आई, आई कांग्रेस (आई) दिल्ली की सातों सीटों पर कांग्रेस का कब्जा। और न जाने कितनी उल्टी-सीधी आवाजें लगा रहा था मारे खुशी के फूला न समा रहा था। दूसरी बस की तैयारी मे उतरते ही पीछे से एक दिल्ली परिवहन निगम की बस आई और कुचलकर चली गई। वहां एकत्रित भीड़ ने बहुतेरा बुरा-भला कहा लेकिन बस-चालक सब अनसुनी कर चलता बना 'बेचारे को गांव की माटी भी नसीब न हुई।'

"महानगरी की भीड़ मे वह भी समाहित हो गया"

साहित्य सदन,
263, छतरपुर, नई दिल्ली-110030

पतन के कारण

☐ राजकुमार 'कमल'

"भगवान तुम्हारा भला करे। कोई चार आना-आठ आना ही दे दो बाबू ! कल से भूखा हूं।" सिगरेट-पान के खोखे की तरफ सिगरेट पीने की तलब बुझाने बढ ही रहा था कि चिथडों मे लिपटे, एक हाथ के मालिक, लगड़े-कुबड़े भिखारी ने मेरे आगे हाथ फैला दिया। उसकी कोढ-गलित कृशकाया को देख एकाएक मेरा भिक्षावृत्ति का घोर विरोधी मन भी पसीज उठा। मैंने अपनी सारी जेबें टटोली। छुट्टे सिर्फ बीस पैसे ही थे। वह बीस के बीस मैंने उसके भिक्षापात्र मे डाल दिये।

तभी बगल मे एक एम्बैसेडर कार आकर रुकी। वह उधर ही घिसट लिया और अभी-अभी कार से बाहर आये भीमकाय सज्जन के आगे हाथ पसार दिया। नाक-भौ सिकोडे उन महाशय ने उसे परे हटने के लिए डाटा-डपटा। लेकिन वह था कि पूर्ववत् डटा रहा। उसकी इस हिमाक्त पर वह सज्जन भड़क उठे— "निखट्टुओ, हाथ-पैर हिलाने को मौत पडी है! सालों ने इस देश को निठल्ला, कंगाल और विदेशो मे बदनाम कर दिया है।" और कहते-कहते उल्टे हाथ मे उसे परे धकिया दिया। तगडा हाथ पडते ही कमजोर पकड से भिक्षापात्र दूर छिटक गया और पांच-दस के चद सिक्के छन्न से सड़क पर बिखर गये।

मैंने गौर से देखा। सक्रिय राजनीति और धार्मिक-सामाजिक कार्यों मे बढ-चढकर हिस्सा लेने वाले, तीन-तीन कोठियो और दो-दो कारो के स्वामी वह सफेद-पोश सज्जन एक अवकाश प्राप्त उच्च सरकारी अधिकारी थे, जिन पर हजारो नही लाखों ही रुपये हड़पने के आरोप थे।

डी० पी० ओ० मटौर
जिला कागड़ा-176001 (हि० प्र०)

रिक्शा वाला

☐ ब्रह्मदत्त शर्मा

कल ही आठ तारीख है।

यह ध्यान आते ही उसने रिक्शा की गति को और बढ़ा दिया। पर सवारी न

मिलनी थी न ही मिली। कड़ाके की सर्दी। नौ बजे रात के केवल एक पुराने कमीज व पाजामे में कैद उसका बेहद कमजोर शरीर उसे जवाब देने लगा था। हाथ-पांव सुन्न हुए जा रहे थे। सिर में पहले ही दर्द था।

अचानक सामने से तेज लाइट की बौछार फेंकता एक तेज रफ्तार वाहन आया—उसकी आंखें चुंधिया गईं।

ड्राइवर ने शराब पी रखी थी शायद वह संभल न पाया और रिक्शा वाले को सीधी टक्कर मार दी। रिक्शा तो सारा टूट ही गया। साथ ही वह रिक्शा वाला अधिक चोट खा गया। उसके सिर में शरीर का रहा-सहा खून भी जाता रहा पर उसे कोई अस्पताल तक न ले जा सका और वह सदा के लिए सो गया गहरी निंदिया में। सुबह हुई लोगों ने देखा तो जमघट लगा लिया। उसे उन लोगों में से कोई नहीं जानता था। सोचा उसकी जेब में पता वगैरा कुछ निकले। जेब की तलाशी ली गई। जेब में तेरह रुपये और एक चिट्ठी के अलावा कुछ भी न था। चिट्ठी में ऐसा कुछ लिखा था।

भैया,

पत्र मिलते ही फौरन चले आओ। मा की हालत हद से ज्यादा बिगड़ चुकी है। आखिरी बार आपसे मिलने की इच्छा कर रही है वो। आठ तारीख तक आप न आये तो महाजन मकान खाली कराने की धमकी दे गया है कल से छोटा भी गायब है मा की दवाई के तीन रुपये भी ले गया। इसलिए भैया पत्र मिलते ही रुपये लेकर फौरन चले आओ।

आपकी अभागी बहन

—गुड्डी

881, सेक्टर-13, महावीर कालोनी
पानीपत-132103

ममता

☐ बालकृष्ण 'रेलम'

नन्ही-सी चिड़िया अपने नन्हे से बच्चे को लिये हुए कभी यहां बैठती कभी वहां। बच्चा ज्यादा दूर अभी नहीं उड सकता था। चिड़ा चक्कर लगा रहा था मानो दोनों की सुरक्षा के लिए पहरा दे रहा था।

अचानक बच्चा उड़ा और दीवार से टकराकर प्लेटफार्म पर आ गिरा। उसकी

गर्दन पर चोट लगी थी। पास खड़े यात्री ने उसे उठाकर जंगले के पास रख दिया। चिड़िया आई मुंह मे रोटी का एक टुकड़ा लेकर वह बच्चे के मुंह में देने का यत्न कर रही थी। बच्चा तड़प रहा था। उसने करवट बदली और जंगले में जा गिरा। चोट और लगी और उसने प्राण त्याग दिये। चिड़िया के मुंह से रोटी का टुकड़ा गिर पडा। वह जंगले मे घुसने का यत्न कर रही थी। वह घुस गई पर लोहे के जंगले से उसके दोनो पंख जख्मी हो गये और ची-ची करती उसने बच्चे के पास ही अपनी नन्ही-सी जान दे दी। पास खड़ा चिडा ची-ची करता कभी जंगले पर बैठता और कभी सामने पेड़ पर।

टी० सी० 16, रेलवे कालोनी,
हनुमानगढ़ जक्शन

रोटी का टुकड़ा

☐ भूपिन्दर सिंह

बालक पिट रहा था, लेकिन उसके चेहरे पर अपराध का भाव न था, वह *निश्चल खड़ा था, जैसे कुछ हुआ ही न हो, महिला उसे पीटती ही जा रही थी तथा कह रही थी, "मर जा, जमादार हो जा, तू भी भंगी बन जा, तूने उनकी रोटी क्यों खाई।"*

बालक ने भोलेपन से कहा, "मां, मैं एक टुकडा उनके घर का खाकर क्या भंगी हो गया?"

"और नही तो क्या।"

बालक ने कहा, "और जो कालू भंगी हमारे घर मे पिछले दस सालो से रोटी खा रहा है, तो वो क्यों नही ब्राह्मण हो गया?"

मां का उठा हुआ हाथ हवा में ही लहर कर वापिस आ गया। वह अपने बेटे के सवाल का जवाब देने मे असमर्थ थी, वह कभी बालक को, तो कभी उसके हाथ मे थमी हुई रोटी के टुकडे को देख रही थी।

पुत्र—श्री एच० एस० निर्माण
रीजनल रिसर्च लेबोरेटरी
केनाल रोड, जम्मू-180001

'प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष'

☐ रमेश आजाद

"रंडी का कोठा और पीर का मजार बस यही वे दो स्थान हैं जहां सकून मिलता है।" मंटो के यह शब्द अक्सर दिमाग में बने रहे। वेश्याओं या देवदासियों के बारे में भी बहुत कुछ पढ़ा सुना है।

शराफत की जिन्दगी व्यतीत करने वाले, छोटे से परिवार में मस्त रहने वाले बाबू रामफल ने कथा-लेखक को बताया, "एक दिन मन उदास था। समझ में नहीं आ रहा था, कि क्या करूं ? क्या न करूं ? विचार कर ही रहा था कि दो मित्रों ने आ घेरा। खाने-पीने के बाद मुझे भी साथ घसीट ले गए। या यूं समझो, मैं भी साथ हो लिया। थोड़ी देर बाद हम 'शरीफजादियों' के मुहल्ले में थे। मित्रों ने कुछ खुसर-फुसर की और अपनी राह चल दिये। पलटकर एक मित्र बोला—

"मियां रामफल, तुम भी घूम आओ न"

"नहीं, मैं नहीं जाऊंगा", मतलब समझते हुए रामफल ने जवाब दिया।

मंटो के 'शब्द' व सब 'पढ़ा-सुना' मस्तिष्क में घूमने लगे। न रहा गया। चल दिया एक कोठे पर।

"अपने सामने पांच-छ: लड़कियों को एक साथ देखकर सकपका गया। एक लड़की स्वयं ही दौड़ी आई और हाथ से पकड़कर अपने बिस्तर पर ले गई। मैला गंदा-सा बिस्तर उतना ही गन्दा कमरे का लगा पड़ा। फर्श पर जगह-जगह पान की पीकें-थूकें, सिगरेट के टुकड़े और कमरे में फैली अजीब-सी बू देखकर उबकाई-सी आ गई। लड़की बिस्तर पर अर्ध-नग्न लेट चुकी थी—मैं कमरे के पर्दों से ढके पार्टीशन को देख रहा था।

"आओ न," लड़की ने धीरे से कहा।

"नहीं," मैंने सिर हिलाया।

"आओ भी, जल्दी करो" लड़की ने हाथ पकड़ना चाहा।

"नहीं"

"क्या यही रंडी का कोठा है जहां मंटो को सकून मिलता था ? क्या यही वह स्वर्ग है, जिसे मेरे मित्र कहते हैं ?" सोचते हुए चांदी के चन्द टुकड़े फेंक बाहर आ गया।

एक उबकाई आई—रोका—दूसरी को न रोक सके और वहीं सड़क पर फैल गए बाबू रामफल।

आजाद नगर, हांसी रोड चौक,
करनाल-132001 (हरियाणा)

बेबसी

☐ किशोर जोशी

"स्साले ! शराब पीकर गुण्डागर्दी करता है। जानता नही शरीफो की हिफाजत के लिए पुलिस चौकी भी है यहा···" गालियो की बौछार के साथ मूंछधारी सिपाही ने दो-तीन प्रहार 'रघु' पर जमा दिए।

सारा मुहल्ला इस समय बलिष्ठ, बिगड़े हुए आवारा, बदमाश रघु को पुलिस के आगे गिडगिड़ाता हुआ देख रहा था—"हजूर क्षमा कर दो फिर कभी ऐसा न करूंगा···"

"हरामी ! तू तो क्या तेरी अगली पीढी भी न कभी शराब पिएगी न ऐसी हरकतें करेगी···जरा चल तो सही"—हवलदार ने भी उसे घसीटा और तीनों पुलिस कर्मचारी उसे दुतकारते-फटकारते, घसीटकर ले गए।

"रघु" के बाद सारे मुहल्ले मे चुप-सी छा गई शायद सभी पड़ोसी खुश भी थे कि कुछ देर हवालात मे रहने पर अक्ल भी ठिकाने आ जाएगी···पता नही रघु की अक्ल ठिकाने आई या नही मगर आधी रात गए वह नशे में धुत्त···गालियां बकता फिर गया··· "हरामी ! जयवर्द्धन निकल बाहर···स्साले तू क्या समझता है कि पुलिस मुझे मार डालेगी—कुछ नही हुआ मुझे···पूरी तीन बोतल पिलाकर आया हू···अब तेरा भी हिसाब चुकता कर दूगा · बड़ा आया गुण्डागर्दी की रिपोर्ट करने वाला।"

जयवर्द्धन ने स्थानीय पुलिस और रघु की पुन. रिपोर्ट करने के लिए उच्च पुलिस अधिकारी को टेलीफोन करना चाहा···मगर पडोसी ने उसका हाथ रोक लिया···"भाई साहब ! हम जैसे लोग तो रघु जैसे गुण्डे की दुश्मनी नही निभा सकते···फिर पुलिस वालों की शिकायत करने पर तो समझ लो बिल्कुल खैर नही···" बेचारा जयवर्द्धन चुपचाप दरवाजा बन्द करके औंधे मुह लेट गया।

भाषा अध्यापक
धारमडी, सुजानपुर
जिला गुरदासपुर, (पंजाब)

अपग

□ प्रमोद शर्मा

बस अभी चली नही थी। बस में भीड और ठण्ड बढ़ती जा रही थी। मैं कम्बल मे लिपटा, सिकुड़ा-सा बस के चलने का इन्तजार कर रहा था।

तभी शोर हुआ, शायद कोई व्यक्ति चढ़ने की जिद कर रहा था और लोग थे कि उसे चढने ही नही दे रहे थे। आखिरकार वह चढ ही गया। एक धक्का-सा लगा और बस रवाना हो गई। उसी धक्के के साथ धकियाता हुआ वह भी मेरे पास तक पहुंच गया। उसने चारो ओर सीट के लिए दृष्टि दौड़ाई, एक याचनापूर्ण नजर। "हूं-हू प्रत्येक आने वाला सीट के लिए ऐसे ही देखता है।" मैंने सोचा और अपना सिर कम्बल मे डाल लिया। कही मुझसे से ही सीट ना माग ले।

बस हिचकोले खाती चल रही थी। वह कभी इधर वाले पर गिरता तो कभी उधर वाले पर पड़ता। "अजीब इसान है। ऐसी भी क्या सर्दी महसूस करें कि कम्बल से हाथ ही बाहर ना निकालें। मेरा क्या पडता रहे।" मैंने सोचा। वह अब भी बगल मे हाथ दबाए कम्बल मे लिपटा इधर-उधर गिर रहा था।

तभी शोर—

"ओए, सीधा नही खड़ा रह सकता क्या ?"—एक।

"भई, भगवान ने जान दी है शरीर मे, अपने आप पर खड़ा रह।"— दूसरा।

मैंने देखा, उसने अब भी हाथ निकाल कर डण्डा नही पकड़ा था। वैसे ही कम्बल मे चारो ओर से लिपटा सर झुकाए खड़ा रहा। तभी किसी मनचले ने उसे धक्का दे दिया। वह लडखडा गया। फिर शोर, फिर से लोग चिल्लाए। पीली-पीली आंखो वाले लोग, गन्दे मोटे, थुलथले लोग। तम्बाकू की दुर्गन्ध सांस मे लिये लोग ''सब चिल्लाए---

"सीधा नही रह सकता क्या ''।" और आगे गालिया।

उसके लिए असहनीय हो गया। पीडा और अपमान के मिले-जुले भाव उसके चेहरे पर स्पष्ट दीख रहे थे। वह जोर से चिल्लाया," नही रह सकता सीधा ! क्योंकि मेरे हाथ नही है। मेरे दोनो हाथ नही है। लो ''लो...देख लो'''।" कहते-कहते उसने अपनी गरदन को एक झटका दिया। कम्बल लोगों पर जा गिरा।

नीचे था उसका शरीर। बिना हाथों का शरीर। बिना डालियो के तने जैसा शरीर। स्तब्धता ! सब चुप्प ! सबकी नजरो मे शान्ति व सहानुभूति की लहर। उसके पास वाले ने उसका कम्बल उठाकर उसके कन्धों पर पुन: डाल दिया।

और मुझे'''मुझे ऐसा लगा, मानो हम सब अपग हो गए हैं। हम सबके हाथ, पैर, आख, कान, नाक'''और दिल ! कुछ भी नही है। हम मास के लोथडे मात्र

हैं। और वह खड़ा-खड़ा हमारी अपंगता पर हंस रहा है।

मेरा सर जो पहले मक्कारी में झुका था, अब शर्म से झुक गया। मैं चाहकर भी उसे सीट न दे सका। शायद इसीलिए कि मैं भी तो अपंग समाज का ही एक अपंग प्राणी था। वह अब भी इधर-उधर गिर रहा था, किन्तु ! अब सब चुप थे।

27, गांधी नगर
हनुमानगढ़ जंक्शन 335512

अनोखा मिलन

❑ बालकृष्ण विक्की

वह हर रोज कोई-ना-कोई अपराध कर बैठता था। लेकिन उसने कभी भी ठंडे दिमाग से यह सोचने की कोशिश नही की कि इसका अंजाम क्या होगा। परन्तु उसके बापू जब-जब भी वह अपराध करता तब-तब एक खूटा दीवार मे गाड देते। एक दिन ऐसा भी आया जब सारी दीवार खूटों से भर गई।

एक दिन यू ही इसकी नजर दीवार पर गड़े खूटों पर पड़ी तो उसने बापू से पूछा—बापू बापू—ये-ये खूटे कैसे हैं। तबउसके पिता ने गम्भीर होते हुए कहा—क्या बताऊ बेटा ये सब···तुम्हारे···गुनाहों···पापों···की निशानी है। तुम जब-जब भी अपराध करते गए मैं तब-तब एक खूंटी दीवार मे गाड़ता गया और आज ये सारी दीवार खूंटों से भर चुकी है।

यह सुनते ही अपराधी घबरा गया। उसको काटो तो खून नही। फिर अचानक अपने बापू के पैरो पर गिर पड़ा और फूट-फूटकर रोते हुए बोला—बापू···मु···झे क्षमा कर दो बापू···मेरे···जीव··न की गाड़ी···अपराध के ऐसे पुल पर से···गु···जर रही थी जो चरमराकर पाप की नदी मे गिरने ही वाली था जिसको···जि···सको एक सहारे की जरूरत थी। वो सहारा आपने मुझे दिया है बापू, आपने दिया है, मैं आज के बाद कभी ऐसा घिनौना काम नही करूगा बापू, जिससे आपका सर आत्मग्लानि से झुक जाये। ये समझ लीजिए बापू कि आपका अपराधी बेटा मर गया। आज तो मेरा जन्म हुआ है।

तब उसके पिता गदगद हो गए। उन्होंने अपने बेटे को सीने से लगा लिया

और उनकी आंखों में खुशी के आंसू निकल पड़े। एक बाप को खोया हुआ बेटा मिल गया।

वार्ड नं० 7, हनुमान मंदिर के पास
सूरतगढ़, (राज०)

ऋण माफी

☐ मोहन योगी

गांव में राजू को भेड़ें खरीदने के लिए ऋण मिलना था। डाक्टर, बी० डी० ओ० आदि ने अपनी कार्रवाई पूर्ण की और भेड़ों को नम्बर की चिपकी लगा दी। बैंक द्वारा विक्रेता को भेड़ों की रकम दे दी गयी। क्रेता को समझाया गया कि अगर बीमारी वगैरह से भेड़ें मर जायें तो डाक्टरी मुआयना करवाना और नम्बर की चिपकी समेत कान काट कर ले आना। भेड़ों का बीमा हो चुका है। ऋण माफ कर दिया जायेगा।

कुछ दिनों के पश्चात जीवित भेड़ों के कान काट लिये गए और डाक्टर साहब से मिलकर ऋण माफ करवा लिया।

अब वह खुश था।

फेफाना-335527
जि० गंगानगर (राज०)

सभ्यता

☐ सूर्यगिरि शास्त्री

"डैडी ! आज आप अपना बोरिया-बिस्तरा उठाकर बाहर चले जाना।"

"क्यों ?" वृद्ध ने पूछा।

"आपको पता नहीं जो मुझ से पूछ रहे हो। हम एक महीने से अपने पप्पू का जन्म-दिन मनाने की तैयारी में लगे हुए हैं। एक आप हैं जो घर में रहकर अपनी आंखों से देखते हुए भी कह रहे हैं क्यों ? आप बूढ़ों को भी पता नहीं कब अकल आएगी। न बैठने का ढंग, न बात करने की तमीज, न किसी के स्वागत करने

का शिष्टाचार। बस पशुओं की तरह खाया-पीया और खुर्राटे भरने लगे। मैंने अब आपको एक बार कह दिया कि आज ही अपनी चारपाई उठाकर बाहर चले जाओ। यहां मेरे मित्र-दोस्त आयेंगे। आप अपने फहड़पन से मुझे सबमें नीचा दिखायेंगे। मैं यह सब पसन्द नहीं करता। आज लोग सभ्यता की दौड़ में—कहां से कहां पहुच गए है। एक आप हैं जो आज भी जंगली आदमियों की तरह पत्थर युग में बैठे हो।"

वृद्ध गोवर्धनदास अपने पुत्र सुरेन्द्र की ये बातें सुनकर यह सोचता हुआ बाहर निकल गया कि क्या यही सभ्यता है ?

मु० पो० बहमन दिवाना
जि० भटिण्डा (पंजाब)

संकल्प

□ अशोक चोपड़ा 'आशू'

डॉ० रमेश काठपाल, जो कि अभी-अभी अमेरिका से वापिस आए थे। अपनी मा की चिता के पास खड़े थे। पड़ोसी बता रहे थे कि समय पर चिकित्सा उपलब्ध न होने के कारण उनकी मा को नही बचाया जा सका।

और डॉ० काठपाल याद कर रहे थे उस दिन को जब उन्होंने डाक्टरी की परीक्षा पास करने के पश्चात विदेश जाकर प्रैक्टिस करने का निश्चय किया था तो उनकी मां ने उन्हें कहा था कि बेटा मैंने तुम्हे इसलिए डाक्टर नही बनाया था कि तुम बाहर जाकर काम करो, मेरी तो यह इच्छा थी कि डाक्टर बनने के बाद तुम गाववासियों की सेवा करो। परन्तु पाश्चात्य सभ्यता के दिवाने डाक्टर काठपाल ने मां की बातों पर कोई ध्यान नही दिया।

और परिणाम—परिणाम उनके सामने था सामने चिता पर जलती मां की लाश। डाक्टर साहब ने मन-ही-मन एक सकल्प किया कि अब वो अपनी बाकी जिन्दगी यही गाव मे गुजारेंगे ताकि किसी दूसरे की मा उस प्रकार चिकित्सा के अभाव मे ना चल बसे।

205/5 नजदीक हनुमान मदिर
रतिया-125051 (हरियाणा)

अपराध

□ जसवन्त सिंह

मेरे पिताजी अकसर मुझे कहा करते थे—बेटा जवानी के नशे मे इस प्यार-व्यार के चक्कर मे पड़कर अपनी जिन्दगी बर्बाद न करना। समाज के रस्मो-रिवाजों मे रहना ही आदमी के हित में है। लेकिन मैंने पिताजी की नसीहत को ना मानकर जाति-पाति को तोडकर, समाज के सब रस्मो-रिवाजों को तोडकर नीता से शादी कर ली—और बहुत से रिश्तेदार छूट गए। एक बार मैं समाज से अलग-थलग होकर रह गया'''और आज मेरा बेटा उसी रास्ते पर आकर खडा हो गया है—जिस रास्ते से आज से 20 वर्ष पहले मैं गुजरा था। और मैं उसे समझा रहा हू—बेटा—इस उमर—मे—जरा सम्भलकर चलना—समाज के रस्म-रिवाज को मानकर चलना ही इसान के लिए बेहतर है। इन रस्म-ओ-रिवाज को तोड़ना अपराध है।

57, गुरु गोविन्दसिंह नगर
मजीठा रोड, अमृतसर

बचाव

□ गोविन्द शर्मा

मेरा पेंशन का मामला काफी दिनो से अटका हुआ था। भार्गव बाबू ने आज-कल-आजकल करते एक साल का वक्त बिता दिया। संयोग से भार्गव बाबू के एक रिश्तेदार मेरे एक मित्र के परिचित निकल आए। उनका पत्र लेकर मैं भार्गव बाबू के पास गया।

रिश्तेदार के पत्र से भार्गव बाबू बड़े प्रभावित हुए। मेरी फाईल निकाली। पूरा नोट मिनटो मे लिख मारा। जो काम एक साल से अटका था, वह तुरन्त हो गया। फाईल पर पूरी कार्यवाही के बाद भार्गव बाबू बोले, "बस इस पर साहब के दस्तखत हो जाते हैं। आपको पेंशन की राशि मिलने लग जायेगी।"

"साहब आज यही है। उनसे अभी साइन करवा लें," मैंने कहा।

"नही, यह फाईल साहब के सामने सात दिन बाद जायेगी। अगर आज ही चली गई तो साहब समझेंगे कि इस मामले को निपटाने मे मैंने कुछ खाया है। मैंने

आपने कुछ नहीं लिया है। मैं क्यों खाम ख्वां बदनाम होऊं? मेरे बचाव के लिए जरूरी है कि मामला सात दिन और लटके," भार्गव बाबू ने कहा।

नहले पर दहला

□ शीतांशु भारद्वाज

दिल्ली के फैशनेबुल बाजार अनारकली (करोल बाग) में पिछले वर्ष एक साड़ी विक्रेता के यहां कोई सम्भ्रांत महिला अपनी कीमती साड़ी पर जरी का काम करवा रही थी। दुकान के बाहर फुटपाथ पर खड़ा हुआ मैं वहां अपने मित्र की प्रतीक्षा कर रहा था। उसी समय अन्दर प्रवेश कर रहे एक सज्जन ने उस महिला को सम्बोधित किया, "मैं कस्टम इंस्पेक्टर हूं।"

"तो ?" महिला ने पेशानी पर बल लाकर उनकी ओर देखा।

इंस्पेक्टर ने महिला को अपना परिचय-पत्र दिखलाते हुए कहा, "आप मुझे अपनी इस आयातित साड़ी की रसीद दिखलायेंगी ?"

साड़ी-विक्रेता के चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगीं। किन्तु वह महिला हाजिर-जवाब के साथ दबंग भी थी। उसने कस्टम इंस्पेक्टर का हाथ पकड़ लिया। अगले ही क्षण उन्होंने उस इंस्पेक्टर की ओर प्रश्न दाग दिया, "क्या आप अपनी इस विदेशी कलाई घड़ी की रसीद दिखलायेंगे ?"

उस भद्र महिला ने उस इंस्पेक्टर की जैसे बोलती बन्द कर दी। बेचारे वहीं बगलें झांकने लगे। वे क्या उत्तर देते? खुद भी तो वे उसी थाली के चट्टे-बट्टे थे!

"क्यों ?" महिला ने उनकी ओर घूरकर देखा।

"बहिन जी, मुझे माफ कर दें।" इंस्पेक्टर उनके आगे गिड़गिड़ाने लगा।

"जा, माफ किया।" महिला ने उनका हाथ छोड़ दिया। वे कुछ ताव में आ गईं, "मेरे पास कोई एक नहीं, ऐसी अनेक साड़ियां हैं। पर आप तो अपने गरेबान में झांक कर देखिए।"

दुकान के आगे तमाशबीनों की भीड़ जमा हो आई थी। इंस्पेक्टर शर्म से पानी-पानी हुए जा रहे थे।

138-डी विद्या-विहार, पिलानी-333031

●●●